डा० राम मनोहर लोहिया : एक लाख आदिवासी पंचमहल में अकाल से पीडित हैं, खुद सरकार के मुताबिक ।

अध्यक्ष महोदय : आर्डर, आर्डर । He should resume his seat now. Shri Shahnawaz Khan

श्री बागड़ी : भूख से लोग मरते हैं और गोलियां चलती हैं और यहां पर बहस नहीं हो सकती ।

13.03 hrs.

ELECTION TO COMMITTEE

Employees' State Insurance Corporation

The Deputy Minister in the Ministry of Labour, Employment and Rehabilitation (Shri Shahnawaz Khan): I beg to move:

"That in pursuance of section 4(i) of the Employees' State Insurance Act, 1948, read with rule 2A of the Employees' State Insurance (Central) Rules, 1950, the members of Lok Sabha do proceed to elect, in such manner as the Speaker may direct, one member from among themselves to serve as a member of the Employees' State Insurance Corporation."

Mr. Speaker: The question is:

"That in pursuance of section 4(i) of the Employees' State Insurance Act, 1948, read with rule 2A of the Employees' State Insurance (Central) Rules, 1950, the Members of Lok Sabha do proceed to elect, in such manner as the Speaker may direct, one member from among themselves to serve as a member of the Employees' State Insurance Corporation."

The motion was adopted.

13.04 hrs.

DEMANDS FOR GRANTS—*contd.*

MINISTRY OF FOOD, AGRICULTURE, COMMUNITY DEVELOPMENT AND CO-OPERATION—*contd.*

Mr. Speaker: The House will now take up further discussion and voting on the Demands for Grants under the control of the Ministry of Food, Agriculture, Community Development and Cooperation. Out of 8 hours, 3 hours and 35 minutes have been taken. So, 4 hours and 25 minutes remain. Shri Digambar Singh Chaudhuri.

Shri S. M. Banerjee (Kanpur): Is the Minister replying today?

Mr. Speaker: Yes. We will go on upto 5-30 p.m. How much time will the Minister take? An hour will do?

The Minister of Food, Agriculture, Community Development and Co-operation (Shri C. Subramaniam): A little more than an hour; then, I might reply tomorrow.

Mr. Speaker: All right. I will give time to more Members. There is such a large demand from Members to speak. I will not be able to give more than 10 minutes to any Member. Members should confine themselves to 10 minutes.

श्री वि० सिं० चौधरी (मथुरा) : अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि हमारे माननीय प्रधान मंत्री इस बात को अनुभव करते हैं कि हमारे देश के सामने खाद्य समस्या मुख्य रूप से उपस्थित है ....

Mr. Speaker: He will get only 10 minutes.

13.05 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER *in the Chair*]

श्री वि० सिं० चौधरी : हम इस बात को महसूस कर रहे हैं कि हमें बाहर से गल्ला हर वर्ष अधिक से अधिक मंगाना पड़ रहा है। जहां हमने सन् 63 में 45 लाख 56 हजार टन मंगाया, 64 में 62 लाख 65 हजार टन मंगाया और इसी तरीके से सन 1965 में 74 लाख 60 हजार टन मंगाना। हम अनुभव कर रहे हैं कि इस तरीके से हमारे द्वारा बाहर से अधिकाधिक गल्ला मंगाया जा रहा है । इस सम्बन्ध में मैं कोई संदेह नहीं करता कि मंत्री जी इस चीज को अनुभव नहीं करते हैं या उनको इस बात को लेकर चिन्ता नहीं है । मैं यह भी अनुभव करता हूं कि

[श्री दि० सिं० चौधरी]

मंत्री जी इस के लिए उपयुक्त भी हैं और मैं समझता हूं कि इंटेलिजेंट भी हैं और इन समस्याओं के बारे में ज्ञान व जानकारी भी रखते हैं लेकिन मेरी एक शिकायत है। और वह शिकायत यह है कि इन समस्यओं को हल करने के लिए जो तरीके अखत्यार किये जाते हैं वह कुछ उपयुक्त नहीं हैं। मिसाल के तौर पर मैं आप से निवेदन करूं कि कुछ ऐसी बात हैं कि जब तक इनपर विचार नहीं किया जायगा तब तक समस्या हल नहीं हो सकती है।

पहली बात तो यह है कि हम ने देखा कि पिछले वर्ष तक किसानों ने जिन्होंने कि आलू बोया था उन को आशा थी कि उनका आलू कम से कम 14-15 रुपे मन के भाव से बिकेगा लेकिन वह बिका केवल 6 रुपये मन के भाव से ही। इसी तरह से गुड़ के उत्पादकों को उम्मीद थी कि उसका उन्हें अच्छा भाव मिलेगा लेकिन उसकी उन्हे आधी कीमत मिली मैं आप के द्वारा मंत्री जी से यह जानना चाहता हूं कि क्या वे किसान को यह सोचने देना चाहते हैं कि वह अधिक उत्पादन करेंगे तो उन्हें कम दाम मिलेगें और अगर कम करेगें तब भी उतने ही दाम मिल जायेगें ? मैं स्वयं एक किसान हूं और इस बात को जानता कि पिछले वर्ष जिस किसान ने 100 मन आलू पैदा किया और उसे 100 मन आलू की जितनी कीमत मिली थी उस ने 200 मन आलू पैदा किया लेकिन उसे दाम पहले की अपेक्षा कम मिले। जितनी कीमत पहले 100 मन पैदा करने पर मिली थी उतनी अब 200 मन भी पैदा करने पर नहीं मिली है। अब किसान को बजाय अधिक पैदा करने के कम पैदा करने का क्या अन्दोलन नहीं करना चाहिए कि अगर हम उत्पादन बढ़ायेंगे तो हमें कम कीमत मिलेगी और उत्पादन घटायेगें तो कीमत हमें अधिक मिलेगी ? जब तक आप इसका प्रबन्ध नहीं करेंगे कि किसानों को उनके उत्पादन के उचित व लाभकर मूल्य मिलें तब तक उन्हें अधिक उत्पादन करने को कैसे प्रोत्साहन मल सकता है ? जाहिर है कि उत्पादन अधिक बढ़ाने से उसे यदि कम पैसे मिलते हैं तो मैं समझा हूं कि किसानों में उत्पादन को बढ़ाने की रुचि पैदा नहीं होगी। आज किसान ने आलू में अपना पैसा खर्च किया और उस का उत्पादन बढ़ाया लेकिन उसको कीमत कम मिली। कोल्ड स्टोरैज में जब आलू रख दिया गया तो वही 6 रुपये मन वाला जो किसान का आलू था वह 12 रुपये मन हो गया। मैं बड़े दुख: के साथ निवेदन करता हूं कि उन किसानों के बच्चे जो फौज में हैं उन के लिए जो आलू जाता है वह तीन गुनीकीमत में जाता है। जब तक आप उत्पादन की कीमत पर कंट्रोल नहीं करते जब तक आप इस बात की गारन्टी नहीं करते कि अगर किसान उत्पान बढ़ायेगा तो उसे अधिक दाम मिलेगें तब तक किसान अधिक उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित नहीं हो सकते हैं। जब तक आप इस बात की गारन्टी नहीं करेंगे कि उत्पादक किसानों को उनकी उपज के जो दाम मिलते हैं उसके मुकाबिले व्यापारियों को उससे अधिक दाम नहीं मिलेंगे तब तक किसानों की रुचि अधिक उत्पादन करने में पैदा नहीं होगी। हम लोगों को यह विचार करना पड़ेगा कि किसानों को अगर बचाना है, किसानों को अगर घाटे से बचाना है तो उसके लिए या तो सरकार यह नीति तय करे कि उनके उत्पादन का ठीक व लाभकर मूल्य उन्हें मिले वरना हम कोशिश करेंगें कि किसान केवल उतना ही पैदा करे जितने में कि उसे अपनी उपज का उचित मूल्य मिल सके। अब जैसे कि दिल्ली बंद की बात लोगों ने यहां सोची किसानों को भी कुछ उस तरीके की बंद करने की बात सोचनी पड़ेगी। क्यों न किसान उतना ही उत्पादन करें जितने से कि उन्हें उचित मूल्य मिल जाय भले ही उत्पादन कम हो जाय ?

मैं दूसरी बात यह निवेदन करूंगा कि उत्पादन बढ़ाने के हेतु सिंचाई के साधनों को बढ़ाया जाय। अगर आप किसानों के लिए सिंचाई के साधनों को नहीं बढ़ाते हैं तो

उत्पादन नहीं बढ़ सकता है। यह भी सच है कि फर्टिलाइजर्स बढ़ाने हैं। यह भी सच है कि खेती के काम में वैज्ञानिक तरीके अपनाने से बाहर के उन्नत तरीके अपनाने से खेती का उत्पादन बढ़ सकता है लेकिन सब से पहला काम सिंचाई के साधनों को किसानों का बगैर विलम्ब के उपलब्ध करना है। हमारे पास जो आंकड़े हैं आप देखें कि 76 करोड़ 14 लाख रुपया पिछले वर्ष खर्च हुआ था जबकि इस साल उसे बढ़ा कर 76 करोड़ 93 लाख किया है जो यह धन बढ़ाया गया है वह बहुत ही कम बढ़ाया गया है। मैं अपने ही जिले के बारे में कहूं मेरे अपने जिले में जहां कि उत्तर प्रदेश में सब से बढ़ा सिंचाई का कार्य हुआ है, अपने ब्लाक के बारे में कहूं कि वहां पिछले 18 वर्ष में जितना सिंचाई का काम नही हुआ उतना वहां केवल 6 महीने में हुआ है। अगर खेती की रुचि बढ़ानी है और वह बढ़ रही है तो उनकी आवश्यकताओं को पूरा करना बहुत जरूरी हो जाता है। और उस के लिए सिंचाई के साधनों को अधिक से अधिक बढ़ाना लाजिमी हो जाता है। मैं आप से निवेदन करना चाहता हूं कि हम बहुत से कामों के लिए बाहर से कर्जा ले सकते हैं, बहुत से कामों के लिए नोट छाप सकते हैं, बहुत सी समस्याओं को हल करने के लिए नोट छाप सकते हैं तो क्या हम यह नहीं कर सकते हैं कि अपने सिंचाई के साधनों को बढ़ाने के लिए रुपये का प्रबन्ध करें? मैंने ज्यादा में न कहते हुए यह दो बातें आपके सामने कहीं।

तीसरी बात मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि बड़ी बड़ी चीजों के लिए कार आदि खरीदने के लिए बहुत सी सुविधाएं सरकार की तरफ से मिलती हैं लेकिन किसान का जो यंत्र है ट्रैक्टर है उस के लिए सुविधाओं का अभाव रहता है। आप देखिये रूस से ट्रैक्टर्स आते थे वह ट्रैक्टर्स आना बन्द हो गये उन की कीमत बढ़ा दी गई। जो बड़े बड़े ट्रैक्टर्स हैं उन का आना बंद कर दिया गया है। जहां इस में भी एक अव्यवहारिक बात जो मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि रूसी ट्रैक्टर्स की उपयोगिता नहीं है वहां काफी ज्यादा दे दिये जाते हैं उत्तर प्रदेश में जहां उसकी मांग ज्यादा है, पंजाब में, जहां उसकी मांग ज्यादा है वहां कम दिये जाते हैं। मुझे इस बात का ज्ञान है कि वहां जयपुर से या बाहर से टैक्टर्स यहां के लाये जाते हैं और वहां जाकर किसान उसको खरीदते हैं। मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं कि अगर हम चाहते हैं कि उत्पादन बढ़े, तो इस तरह के यंत्रों के कारखाने को खोलने चाहिये, उनका उत्पादन होना चाहिये। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि टैक्टर्स की शिक्षा देने के लिये केवल 136 आदमियों के लिये हिसार में एक कार्यक्रम किया गया, जब कि कहीं ज्यादा आदमियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जरूरत थी अगर आप उत्पादन बढ़ाना चाहते हैं तो आप को प्रबन्ध करना पड़ेगा टैक्टरों का, उन की मरम्मत का। गांवों में आप जाकर देखिये इन्जिन पड़े हुए हैं लेकिन उनकी मरम्मत करने वाला कोई नहीं है, वहां पर टैक्टर्स खराब पड़े हुए हैं, उनको देखने वाला नहीं है, इस लिए मैं कहूंगा कि गांव गांव में इसकी व्यवस्था की जाय। गांव गांव में सम्भव न हो तो कम से कम ब्लाक स्तर पर तो जरूर करना चाहिये। ब्लाकों में जो अधिकारी हैं, कागज और कलम से काम करने वाले हैं, उनको हटा कर टैक्टरों की मरम्मत करने वाले इन्जिन्ज की मरम्मत करने वाले लोगों को रखा जाय तो मैं समझता हूं कि हमारे देश का उत्पादन बढ़ाने की समस्या ज्यादा अच्छी तरह से हल होगी।

उपाध्यक्ष महोदय, अब मैं कुछ थोड़ा सा सहकारिता के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं। मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि सहकारिता क्षेत्र बड़ा महत्वपूर्ण क्षेत्र है, उसकी तरफ पूरा ध्यान नही दिया गया है। इस देश के अन्दर इस सहकारिता ने जो कार्य किया है वह सब से अधिक है और मुझे यह कहने में संकोच नहीं कि इस में हमारे रिजर्व बैंक का जो रुपया लगा है, करोब ... अरब रुपया, यदि डेढ़ यह शिक्षा के लिए मान लिया जाय और खर्च हो जाय तो ज्यादा नही होगा। गांव के स्तर पर हजारों में काम करने की, जिले के स्तर पर लाखों में

[श्री दि० सि० चौधरी]

काम करने की और सूबे के स्तर पर करोड़ों में काम करने की क्षमता इस सहकारिता पैदा हुई है। जो किसान 100-200 रुपये का हिसाब नहीं रखता था, वह आज हजारों में हिसाब रखता है। इस तरह से पिछले दो तीन वर्षों में जो काम बढ़ा है, उस से मालूम होता है कि इसका कितना तेजी से विकास हुआ है। हमारे यहां सैन्ट्रल कोआपरेटिव बैंक में शेअर कैपिटल चार लाख से बढ़ कर 69 करोड़ 64 लाख हो गया है, डिपाजिट 37 करोड़ 69 लाख से बढ़ कर 195 करोड़ 94 लाख हो गया है। वर्किंग कैपिटल जो 56 करोड़ 37 लाख था, उससे बढ़कर 5 अरब 27 करोड़ 34 लाख हो गया है इस तरह से यह काम बढ़ा है। मैं कह सकता हूं कि कितनी प्रगति इस सहकारिता के क्षेत्र में हुई है, उतनी प्रगति और किसी क्षेत्र में नहीं हुई।

मैं निवेदन करूंगा कि हमारा जो प्राइवेट सैक्टर है, और हमारा जो पब्लिक सैक्टर है वे दोनों इस सहकारिता के क्षेत्र को आगे नहीं बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि उन में से एक में पूंजीपति काम करते हैं दूसरे में पूंजीपतियों के लड़के सरकारी कर्मचारी काम करते हैं। मैं मंत्री महोदय से निवेदन करूंगा कि अगर आप चाहते हैं कि देश के अन्दर समाजवाद की भावना पैदा हो, जनता स्वयं मिल कर काम करे अगर आप चाहते हैं कि पूंजीवाद को खत्म किया जाय तो सहकारिता का जो पेड़ पैदा हुआ है, जिसमें फल लग रहे हैं, उस को सूखने न दिया जाये। मैं निवेदन करूंगा कि आप रिजर्व बैंक को, जो कि सहकारिता का दुश्मन है, जो सहकारिता के क्षेत्र को आगे नहीं बढ़ने देता है, जो पूंजीपति इस सहकारिता के कार्य को आगे नहीं बढ़ने देते हैं, उनका अंकुश इस पर से हटाइये। अगर ऐसा नहीं करेंगे तो यह आगे नहीं बढ़ सकेगा। अगर सहकारिता के क्षेत्र को कोई अभिशाप है, कोई रुकावट है तो वह रिजर्व बैंक है जो इस को आगे नहीं बढ़ने देता है। मैं यह बात केवल जबानी नहीं कह रहा हूं, बल्कि मैं इस आधार पर कह रहा हूं, आज जो हिन्दुस्तान की सब से अच्छी सोसायटी है, उस जिला सहकारी बैंक का मैं मैनेजिंग डाइरेक्टर हूं, जो उत्तर प्रदेश की सब से बड़ी सहकारी समिति है और उस में रह कर मैं ने हिन्दुस्तान के हर सूबे की सहकारी समितियों का अध्ययन किया है और मुझे हर जगह यही आवाज सुनने में मिली कि रिजर्व बैंक वाले सहकारिता के कार्य को जो कि जनता द्वारा चलाया जाता है उसी तरह से डील करते हैं, जिस तरह से वे औरों को डील करते हैं। हमारी उस रिपोर्ट में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि हमारे लिये अलग से बैंक बनाया जाय। जिसका सम्बन्ध रिजर्व बैंक से न हो, लेकिन यदि उसी से सम्बन्ध रखा जाना है तो उसके जो गलत कानून हैं, गलत तरीके हैं, उनको हटा दिया जाय, तभी मैं समझता हूं कि यह सहकारिता का क्षेत्र आगे बढ़ सकता है। मैं ऐसा कहने के लिये क्षमा चाहता हूं।

उपाध्यक्ष महोदय, मुझे दो-तीन मिनट और दे दिये जायं। मैं आपसे कह रहा था कि सहकारिता के क्षेत्र के लिये, उस की उन्नति के लिये रिजर्व बैंक के अंकुश से उस को निकाल दिया जाय। आप देखिये जहां रिजर्व बैंक 60-61 फीसदी लोगों को कर्ज के लिये रुपया देता था, अब वह 45 फीसदी हो गया है। उसके अधिकार पहले से और अधिक बढ़ गये हैं। मैं उनकी जो कर्ज योजना है उसके सम्बन्ध में कुछ सुझाव देना चाहता हूं, लेकिन मैं आपसे निवेदन करूं कि उन सुझावों के बारे में मंत्रियों से मैंने कहा लेकिन सुनाई नहीं होती, प्रधान मंत्री से कहा, सुनाई नहीं होती, अब उपाध्यक्ष महोदय, अन्तिम रूप से आपसे प्रार्थना करना चाहता हूं कि कम से कम मेरी सिफारिश आप मंत्री महोदय से यही कर

दें कि मेरा जो व्यावहारिक सुझाव है रिजर्व बैंक के जाल से निकालने के लिये, सहकारिता को आगे बढ़ाने के लिये, उस पर मंत्री जी विचार करें और देखें कि किस तरह से हम 10 वर्ष में रिजर्व बैंक के जाल से निकल कर हमारा रुपया निजी हो जायेगा और हम सहकारिता के क्षेत्र में आगे बढ़ सकेंगे ।

Shri Karuthiruman (Gobichettipalayam): I support the Demands for Grants of the Ministry of Food, Agriculture, Community Development and Co-operation.

I really commend the fortitude of our Food Minister for having faced this grave food situation. Long speeches are made by hon. members on the Opposite as well as on this side and very rarely we find that they have given any practical suggestions for increasing production. It is very easy to criticise anybody and it is very easy to say that food should be made available to each and all. Really our Agriculture Department has done a wonderful work. As a farmer working in the field, I can certify that because of the research work that has been done by the Agriculture Department, we have reached at least these targets in food production. I have been using the seeds of the Agriculture Department in paddy and in almost all other fields. As early as 25 years back, I had realised 60 maunds of paddy per acre on an average of 100 acres; it was due to the research work done by the Agriculture Department. But the necessary encouragement is not given to the Agriculture Department. The Agriculture Department is treated as a third rate or fourth rate department of the Government; it is only the revenue department or some other department that is given the first grade and the Agriculture Department is treated as a third rate department. Because we are short in food production, because we are facing a food problem, we have been at least thinking of agriculturists. Previously the plight of the peasant was "unwept, unhonoured and unsung": nobody cared for him. Even now nobody would have cared for him but for the shortage of food. Therefore, so far as we are concerned, I can say, "long live shortage"; as long as shortage is there, the farmer is recognised. Of course, that should not be our aim.

We want to know whether the food problem will be solved. I am an optimist and I can say that, with the existing irrigation and other facilities, I can feed 600 million people with a good nutritive food; I can say this as a practical farmer. Are we moving in the right direction? Yes; our agricultural scientists, agricultural demonstrators and agricultural research scholars have done very good work; they have produced good seeds. Thanks to the National Seeds Corporation, it is doing a very good work. In order that the seeds do not get adulterated, our Food Minister should see that the seeds are certified as pure and they maintain their stability. Even the hybrid seeds that have been produced by the Agriculture Department are good ones. The latest types of seeds which have been introduced, namely, Taichung Native-1, Taichung 65 and Tainan 3, are giving wonderful results. All our farmers are ready to take them to their farms and are ready to increase the production. I have myself taken Hybrid shorgam CSH 1 for my farm and have sown it in 20 acres; and I am sure to get 5,000 pounds per acre on an average of 20 acres, i.e., 5,000 kilos per hectare. I have taken from the Agriculture Department ragi seed which has given me an yield of 4,000 kilos per hectare, i.e., 4,000 pounds per acre. I have taken bajra seed—it is to be used for dry conditions and with proper irrigation I have got an yield of 1,500 kilos per acre These are the achievements of Agriculture Department. I invite all the members to come and see my farm in Coimbatore district.

An hon. Member: Is it in a village?

Shri Karuthiruman: It is certainly in a village and not in a town or city like Bombay or Delhi.

Therefore, it is the duty of our Government and the people to support and encourage our young scientists to do

[Shri Karuthiruman]

further work. Mere seed production will not do. To get better yields, we should have good manures. What are the manures that we can use? So far as I am concerned I can say— of course, it is a controversial matter— that witnout using fertilisers, I can get an yield of 60 maunds. Even as early as 1940, without using ammonium sulphate or any chemical fertiliser and by using compost and organic manure, cow dung, etc., I have got an yield of 60 maunds. But how is it possible to expect every farmer to secure such increase in production ununless he takes to intensive cultivation? Therefore, chemical fertilisers are also necessary.

When the question of chemical fertilisers comes up, there is a controversy that we find here about how to have these fertilisers and how to increase the fertiliser production. And what is done is not supported by so many hon. Members. They just find fault with it whether it is this deal or that deal, and they call one as unpartriotic and the other as patriotic as if those who criticise these deals alone are patriotic people and those who support the fertilisers deal are not patriotic. The people who support the deal and talk in favour of them are not in anyway less patriotic; they do not have even an atom less of patriotism than those who criticise, either in their actions or in their lives or in the practical side of things.

In the circumstances that prevail in our country today, the use of fertilisers is very necessary. During the three Five-Year Plan periods, our planners, the so-called planning members, have been industry-biassed and have been urban-biassed. They have not devoted much attention to agriculture and they have not shown a rural bias. They have not devoted much attention towards increase in production and towards the poor people and the agriculturists in the villages. If only the foreign exchange which had been spent on the import of foodgrains had been spent on the establishment of fertiliser factories, I think much of the food problem would have been solved by now. But that has not been done. All our foreign exchange has been drained away in the establishment of industries, and when the question of agricultural production and the production of fertilisers and the setting up of fertiliser factories comes up at the fag and of the Third Plan period, we find that there is no foreign exchange available for setting up of fertiliser factories. And people start attributing motives even if we accept help from foreign collaborators who want to help, by calling it unpatriotic and so on. If only the planners had planned for two or three factories to be set up for fertiliser production in the First and Second Five Year Plans. I think we would have been able to solve ever so many problems, and by this time we would have been in a position to ask the American ships to come to our shores to take away our goods and our nutritive foodstuffs to other parts of the world where there is shortage.

Even in regard to the use of fertilisers, one must be very careful. Nitrogen, phosphoric acid and potassium or NPK should be balanced in such a way that we shall get the optimum results; soil tests should be conducted and the fertilisers should be used in a balanced way to each and every crop and crop pattern. If we do so, then we can certainly solve the problem.

In a good season, there is 50 per cent increase in production while in a bad season there is 50 per cent less production. We should, therefore, see that there are proper incentives given to our agriculturists so that they will be able to rise to the occasion and they will see that our food problem will be solved.

The next thing is to give them improved seeds and proper irrigation facilities. We have so far concentrated only on very big irrigation projects. We have not paid much attention to the minor irrigation projects. We have not done also anything to tap the subsoil water and the underground water.

In the foreign countries, even in places where they have got only ten inches of rainfall, by having tube-wells or by tapping the underground water at a depth of 1000 feet or 2000 feet, they are able to take the water and irrigate the lands in spite of the failure of the monsoon by having recourse to lift irrigation, and thereby they have been able to get all the crops successfully.

The next most important thing is the price offered to the poor agricultural ryots. Unfortunately, the price offered to the agricultural ryots is not fixed by the farmer but by the ICS or IAS officers sitting in the four-walled single room; it is fixed by the urban people. The policies that are followed are consumer-oriented and are not producer-oriented. In whichever country there is a producer-oriented policy, the agriculturists have produced more and there has been abundance of production, and wherever there is a consumer-oriented policy, they have not produced more and there is still shortfall in production. Take, for example, Russia there they have just concentrated only on consumer-oriented policies, and, therefore there is shortage in production there. But in America where there is producer-oriented policy, there is excess in production. Even the communist countries like Russia, Yugoslavia and Poland want to secure help from America where there is a producer-oriented policy.

As regards the price fixed by the Agricultural Prices Commission, even if the agricultural ryots represent there viewpoint, that is not taken into account; that is taken only as an advice and that is not put into effect. Even in the matter of marketing, the poor agriculturist does not get the benefit. Whenever a shortage is there, Government come forward with their procurement policy. When Government enter the market to purchase foodgrains at the procurement prices fixed by them, they just become unpopular because they go on procuring from the producers at that price. But those who are capable of doing blackmarketing are well off. When Government introduced control, then there is another market which is prevailing. Some people who are anti-nauonal and anti-social get the benefit, but the good people do not get the benefit of the price at which it is available in the blackmarket. Therefore, I would say that let there be a levy system of procurement. But the moment there is a levy system, some hon. Members start criticising it. The levy system is there for a national cause when there is shortage in production, so that the people who produce more can get some advantage while the people who produce less will be at a disadvantage. Per acre, so many maunds of paddy or rise should be fixed and the balance should go to the free market. Unless there is a national levy system of procurement all the available produce should go to the free market. The levy system is in order to feed those areas where there is statutory rationing. In the villages or the areas where there is no statutory rationing, the agriculturist should be allowed to retain with them a certain part of the production to allow for costs etc., and beyond that there should be free marketing. Therefore, it is better to see that partial control is there. There should be two prices so that the man who produces more should have the advantage of a greater price. If you give incentive prices and if you give all the facilities required for the farmers to increase agricultural production, I am sure you will see that the food problem can be solved.

As Goldsmith has said:

> "Ill fares the land to hastening ills a prey,
> Where wealth accumulates and men decay,
> Princes and lords may flourish or may fade,
> A birth can make them as a birth has made,
> The Bold peasantry, the country's pride, When once destroyed, can never be supplied".

The question is whether we are going to ensure the existence of this bold peasantry or not. If we ensure the existence of this bold peasantry and

[Shri Karuthiruman]

give them all the facilities. I am sure we shall be able to solve the food problem.

Shri Surendra Pal Singh: (Bulandshahr): During the brief time I have at my disposal, I shall confine my observations to the production aspect of the food problem only, because I feel that no food Minister of the Central Government can solve this problem unless there is increased agricultural production. There is no denying of the fact that all is not well with our agriculture, and that there is stagnation in this very vital sector of economy. This has been admitted by Government themselves.

It is rather a sad commentary on our planning system that even after our three Five Year Plans, our agriculture has come to stay in a position where our average annual production during the Third Plan period is likely to be less than what it was in the Second Plan period. During the last year of the Second Plan, production had risen to 80 million tonnes, whereas the average annual food production during the Third Plan is going to be somewhere near 79 million tonnes. This is not much of a progress. It is true that our overall production of foodgrains in the country has increased by as much as 75 per cent since Independence. But that has been as a result of extensive measures taken by Government by bringing more virgin land under the plough and by providing more irrigation facilities etc. and that has not been as a result of any improvement in the per-acre-yield. So long as improvement in agricultural production is only the result of extensive measures, this problem will not be solved, all our efforts may be neutralised by the enormous rise in population and so many other economic factors as result of which the demand for food is increasing every day. Our salvation really lies in our ability to increase our per acre yield, which is very important. I am very sorry to say that in this respect the Government have not taken effective steps as they ought to have. Even our experts in this country have said that the per-acre yield has not increased very much. In this connection, I may quote Mr. Swaminathan, who is the head of the Botony Division in the Indian Agricultural Research Institute, who, while speaking under the aegis of the U.S. Information Service, said that the per-acre yield of important foodgrains in the country has remained static all through since Independence. I would request the hon. Minister of Food and Agriculture to give this matter his utmost attention and see that every effort is made for increasing our per-acre yield.

All this makes us feel that the cut-look on the food-front, on the agricultural front is rather grim. Some very drastic steps have to be taken to make a break-through so that we can sustain the improvement in agricultural sector for a number of years and then alone we can go over the hump of the Malthusian trouble. Mere palliative and traditional thinking will not do. It is ancient history that taught us that nations have vanished from the surface of earth when their agriculture lagged behind and when there was stagnation in their agriculture.

We have to give our utmost attention to the problems of the agriculturists. I would like to congratulate the hon. Minister for the steps he has taken in this direction. He has started the ball rolling in the right direction. We also welcome the decisions taken at the recent Chief Ministers' Conference where they have clearly defined the administrative responsibilities and also the obligations of the State Governments and the Central Government for carrying out the various development plans. We only hope that the pious promises made by the Chief Ministers will be carried out by them faithfully in the future. Their performance in the past has not been very good and there is a great deal to be said about that. I hope that they will be able to fulfil the promises made at the recent Conference in the future.

The next important question is why is there stagnation in our agricultural production? There are many reasons for that. I have no time to go into all of them. I will briefly touch upon two or three reasons which according to me are important.

Firstly, the greatest handicap this country or this nation suffers from is the lack of national character and the lack of spirit of self-sacrifice. The whole nation is faced with a moral crisis. No nation in the world with the moral fibre as weak as ours can make any progress in any field of human activity, whether it be agriculture or anything else. I have to raise this point because every now and then the hon. Minister of Food and Agriculture refers to the Japanese agriculture and the amount of progress that that country has made in that field. I am sure that he must have made an analysis of the reasons behind this tremendous progress made by Japan. The main reason is the character of that nation where everything works like a clock. I would like the hon. Minister to tell us whether we have such a spirit in our country. If we have not—I am sorry that it is then a reflection on the leadership of our country—I appeal to Mr. Subramaniam not as the Food and Agriculture Minister but as a dynamic leader of the country to tell the House whether he and his collegues have done anything for improving the moral health of the country. If he has not done that, he must do something about it quickly; that is very important.

The second reason is the well-known extreme poverty of a large number of small farmers in our country, who constitute nearly 80 per cent of our rural population. This extreme poverty has come about as a result of their being neglected by the Government. I am very sorry to say that the peasantry of India has been neglected by the Government for a long time. Firstly the British Government neglected them. That at least is understandable. I am sorry to point out that our own Government have neglected them. They did not do it deliberately, but that has happened because of their emphasis on industrial improvement. The agricultural sector was not given the same attention as it deserved. They have more or less allowed the things to drift in the hope that our agriculturists would find for themselves. Because of this neglect, our farmers have not received the necessary protection and help required from the Government with the consequence that they could not rid themselves of this oppressive poverty. Actually their back is broken now. In this connection, observations are at times made that the Indian farmers are very conservative, they are lethargic, they are averse to adopting new and modern methods of agriculture, etc. I can boldly say that this is not correct because I am a farmer myself and I live in a village. The fact of the matter is that it is not their aversion to adopting new and modern methods of agriculture, but their economic condition is so poor and they are so heavily under debts that they are unable to improve their lot. They have not got the resources to get the necessary inputs. The required things are also not available in time. If they are given the same facilities as are made available to the bigger farmers in our country, I am sure that they will be just as good as anybody else in the country. Then, it will be possible to increase our food production by at least 20 per cent with the existing knowhow in our country. I can give my own example. I am not an expert in agriculture. I am just a farmer taking help and advice from the local people. On the basis of the existing knowhow, my average production of all the foodgrains is 20 per cent, 30 per cent more than the average for any locality. I can say that I do not use any modern techniques; I do not make use of chemical fertilisers. I am relying more on proper rotation of crops, green manuring, compost manuring, organic manuring etc. With this my production is 20 per cent more than the average. The reason for this is that I am able to provide all the inputs in abundance and in time, which the poor farmers are not able to get. That is their main handicap.

[Shri Surendra Pal Singh]

I would urge upon the Food and Agriculture Minister to give his utmost attention to this problem of poverty of the small farmers and do something about it.

How can we reduce their indetedness as early as possible, is the main question. We must make finances available to them in the requisite quantity and at the cheapest rate possible as much as they want. After 15 years of independence, all that we have been able to do is to make available only 15 per cent of the requirements of the farmers through the Government agencies. I will call the Indian farmer as the poorest industrialist in the country. He is compelled to borrow from the money-lender 25 per cent to 40 per cent of his capital requirements. I will challenge any big industrialist or even the Finance Minister whether he can run a business successfully with a borrowed capital at 25 per cent to 40 per cent interest. It is very important, Sir, to make funds available in an abundant measure to our small farmer so that all his requirements can be met in time. Then only we can have any increase in agricultural production.

Many speakers who preceded me have spoken about the remunerative price. It is true that prices of agricultural produce have gone up. But they bear no relation whatsoever to the cost of living and other things which the farmer has to purchase for his requirements. The cost of living index is going up and the prices of commodities which the farmer needs are going up in a very very high proportion. But the farmer is not getting adequate price for his produce. The Government must evolve some sort of a scientific pricing formula which must have some relationship with the cost of living index, so that the farmer is able to make both ends meet. Unless we give some incentive prices to him, his economic condition will not improve. There is no use giving him only loans, which he has got to return some day with interest. The Government must evolve a satisfactory pricing policy in this connection, so that his economic condition can improve and his production can go up.

Then, Sir, it is very essential that the farmer gets some extra income in the rural area itself,—apart from his land. Because of the pressure of population and because of the pressure on land, he is finding it difficult to make both ends meet. It is very necessary that some industries are set up in the rural areas so that they can earn some extra money and supplement their income.

We all know, Sir, that education in the rural areas is of a very poor quality. The boys from the rural areas cannot compete with the boys in the cities for any employment. The farmers cannot also afford to send their children to cities for the purpose of education. I would urge upon the Government of India, through you, to see that the educational conditions in the rural areas are improved so that the boys there get good education and then alone they will have a better chance of competing with the city boys and get better employment opportunities. That will also help the economic conditions of the farmer.

Now, there is another important question—the *sawai* system which is prevalent in the U.P. and Bihar States. Under this system the seeds are given to the farmers for *rabi* crops in the month of September or October and in the harvesting season, that is in April, they take back the seed in "SAWAI" "quality"- i.e. for one maund they take back 1¼ maund in six months.

This, Sir, is the worst type of usury indulged in by the Government Department; this is really very bad. We raised this matter when Sardar Swaran Singh was the Food and Agriculture Minister and he was shocked to hear that the Government Departments indulged in such practices. He also promised to look into this matter. But we have not heard anything so far. Perhaps he had no time to look into this. We would request the present hon. Minister of Food and Agriculture to look into this question of *sawai* system through which the poor

farmer is made to part with 10 seers of grain. 25 per cent of his produce for the seeds he borrows from the Government. With these words, I support the Demands.

Mr. Deputy-Speaker: Shri Biren Dutta. Yesterday, when I called Shri Biren Dutta, another Member, Shri Bhajahari Mahato, spoke. Now I am calling Shri Biren Dutta.

Shri Biren Dutta (Tripura West): I take this opportunity to raise my voice of protest against the callous attitude of the Government towards the people of Tripura. This Government professes very much concern for the welfare of the tribal people. The people of Tripura live in the hill areas adjoining Assam, near the disturbed Mizo district. Unlike many other tribal areas, Tripura is Centrally administered territory.

The callous and cruel neglect by of Government of the Tripura people and the failure of the Government to supply the requirements, specially of food, in Tripura is causing very serious concern to the Government of the Union territory as well as to the people there. The Government has put us, two representatives in Parliament, behind prison bars ever since 1962. Shri Dasaratha Deb has been returned to this House three times. He is an undisputed leader of the Tripura people. He has been kept in detention. I was also kept in detention. I do know what is going to happen. When I had an opportunity in the Agartala jail to meet the Chief Minister, Mr. Singh, I expressed to him my wish that I may be given a chance to come over here and tell the House the true story of what is happening in Tripura.

In 1962, Tripura had only a population of 9 lakhs. After that, due to influx from Pakistan, the population has increased to 14 lakhs. Because of the nature of the terrain, although there is heavy rainfall in Tripura, the production of food is not sufficient to feed the people. But plenty of jute and mesta are grown. These are despatched to the jute mills which produce jute goods to earn valuable foreign exchange.

In 1963-64, the Central Government allotted 32,500 tonnes of rice and 6,700 tonnes of wheat to Tripura making a total of 40,000 tonnes of foodgrains. In 1964-65, the allotments were 40,500 tonnes of rice and 1,600 tonnes of wheat making a total more or less the same as in the previous year. This year there has been serious failure of rain and there was really no crop in hill areas where the seeds are sown on hill tops. When, therefore, the need for supply from outside has become the greatest, supply by the Centre has been cut down to half. Now, not an ounce of rice has reached Tripura. I was in Agartala day before yesterday. When I met the acting Chief Minister, he told me that there has not been sent to the Tripura godowns even an ounce of rice till that day.

I am drawing the attention of the House to this serious situation. The Government has opened only 35 fair price shops in and around Agartala town covering only a lakh of people. But in the hill areas, where there is really a serious crisis, there is no such provision. The press run bun by the Congress Party or by other independent people has given so many details of starvation cases. Starvation deaths have been already reported in Mohanpur, Kamalghat, Bamutia, Ramgatia etc. The Chumanu area of Kaila Sabar sub-division is passing through a severe crisis. This is mainly inhabited by tribal people who practise *jhoom* cultivation. Last year, the forest department stopped this *jhoom* cultivation. There are about 1,500 tribal families involved. They have had nothing to earn in the last year. Now in that area, rice is selling at Rs. 75—80 per mound. People are already moving from the hill tops towards the plain areas. Nearby the Government established three tribal rehabilitation colonies with much ado; they started schools. Housing arrangement was also there. Now all those colonies have been deserted by the tribal people.

[Shri Biren Dutta].

I can give you a list of persons who have died. The Government has inquired. But these have been recorded as deaths due to mal-nutrition! The SDO and other people have clearly said that these families cannot be saved unless they are supplied with food. At the same time, no relief works have been started. I asked the acting Chief Minister why he is not making any relief arrangement. He said, 'We have no rice at all in our stock'. Despite this widespread famine, no relief work is there. The people cannot go on under such circumstances. This is what is worrying me. I will have to return on the 23rd to Agartala back into prison, because I have come only for 15 days on parole. I earnestly want to draw the attention of the Food Minister to this in the hope that his human heart may be touched by my appeal to him that he should immediately rush foodgrains to Tripura. They sanctioned only 2,000 tonnes a few days ago. What has been told by the Acting Chief Minister is that rice is to be lifted from Hujai in Assam. That is good, because the transport will be easier for the Tripura administration; it can arrange the transport without difficulty. Tripura has got only 5 miles of railway. The foodgrains have to be moved by road. This has to be done before the monsoon sets in. Landslides occur on the Agartala-Assam road with the onset of the monsoon. So if the rice is not rushed before the monsoon sets in, before the end of May, I do not know what may happen there.

Already on March 10, 11 and 12, there was complete hartal in Agartala; throughout the Territory, Government had to close down schools and colleges for seven days. People were satisfied by the promise that food was being rushed. They were told that the Chief Minister had gone to Delhi and he would arrange for food. Yesterday or the day before, he returned. He is reported as having said in Calcutta—I have seen it in the Calcutta papers—that he requires 19,000 tonnes of rice and that the Central Government had agreed to provide it.

I will make a request to the Food Minister. This is a very small quantity. 35,000 tonnes of rice can meet the needs of Tripura for a whole year. This can be provided from Assam godowns. Sometimes it is given from Bihar or Orissa. But that takes much time. If these 35,000 tonnes of rice are supplied and an order issues here and now to that effect, and arrangements for wagons and other things are made immediately, there may be some safety for us. Otherwise, I cannot say what will happen.

So I will request the Food Minister to do the needful. I have even written to the Home Minister regarding all these things. It seems there must be demonstration and struggle to get these things. Nobody can resist dying people from demonstrating for their basic needs. This is a backward area without any communication, without any proper arrangement for supply of food and if the situation is allowed to continue, it will mean playing with fire, with the life of the local people there. The present acute sufferings of the people are primarily due to the policy of the Government. One realises that in times of crisis, the sufferings must be shared by all. But what do you see? Food crisis has been utilised as a God-send by the profiteers, and blackmarketeers. They are minting money out of the tears, and toils of the people.

Under such circumstances any honest government should have taken up the procurement of all the marketable surplus, should have taken up the trading in foodgrains completely. Instead of that, what is Government doing? The Government of India is begging before every country, especially before America, for food under P.L. 480. (*Interruption*) Government is begging before every country but we have seen that it is especially so with regard to the U.S.A. Instead of taking stern action against the people concerned, those who are creating the

trouble by hoarding and such other acts, instead of taking such normal steps which would have mitigated in some way our troubles they have gone to America. I have seen in the Press reports how philanthrophic these US imperialists are. It is clear by the terms they have dictated in regard to the concessions to the foreign fertiliser monopolists before agreeing to release food a few months back. And now, the World Bank Official, Mr. Woods has gone still further and demanded majority shares for the fertiliser plants, and this has been in a way accepted by the Government. This is a very shameful act at least to me. Only it has been stated there that the partner will be an Indian whose share-capital will be found by the Government from public and financial institutions. After all, he who pays the piper will also call the tune. Any protestation that despite dependence on U.S.A. for everything in our economy, including food, we will still maintain our independence is rapidly being proved false by the developments and happenings in India. And there are some people who talk loudly about the honour, about the self-respect of our nation. Our country's honour and self-respect and even its hard-won independence are being jeopardised by the policies that are being pursued by the present Government. I would urge upon the Government to think and see where its policies are leading the country, before it is too late. With these few words I conclude.

Shri Narendra Singh Mahida (Anand): Mr. Deputy-Speaker, Sir, our formidable difficulties are, backward agriculture, food shortage, rising price-level, population explosion and China. Poverty and under-nourishments are everywhere. The basic trouble is that while farming output has risen by two and a half percent. a year, population grows by three per cent. Therefore, it is no wonder that millions of our countrymen are undernourished. The land does not yield as it should. In Italy they get nearly 3,240 lbs. of rice from an acre, whereas in India we get only 900 lbs. Our yield of rice per hectare continues to be one of the lowest in world. This should be taken as a challenge and should spur us to more vigorous and intensified efforts both in the research institutes and in the fields.

The supply of P.L. 480 grains from the U.S.A. has greatly helped us to meet our food difficulties. But we must remember, it is a temporary expedient to get over shortage. This grain import has been a permanent feature and its continuing availability has distracted our attention from increasing food production.

We must learn to be self-reliant in food. To achieve this if necessary, we must accept a slower pace of development rather than continue to depend upon external aid. In these days, the tendency among most developing countries is to ask for more and more foreign aid. It is certainly remarkable that a country like Taiwan (Formosa) should proudly state that it no longer needs any more foreign aid. It has recently closed down the Office of the U.S. Agency for International Development. Taiwan claims that it has reached the "take-off" stage in economic development and can now manage on its own. In this process it has attained the highest standard of living in Asia, apart from Japan, and has recorded spectacular progress in both industry and agriculture. Admittedly all this has been achieved with the help of considerable U.S. aid in the past sixteen years.

We are also receiving such aids from the U.S.A. and other countries for the last several years, and where are we today? If tiny Taiwan can do it, why cannot we do it?

The secret of success lies in the effective utilisation of this aid, without forgetting the ultimate goal of self-sufficiency.

[Shri Narendra Singh Mahida].

Our effort to increase agricultural production is not satisfactory. A World Bank Team has blamed our administrative machinery for the poor results in agricultural production. The Team said that India does not lack technical know-how, hard work, or even the necessary finances. But what it suffered from was poor husbanding of available resources. The Team has presented a report wherein it says that even the minimum land reforms have not been implemented, legislation in most places has been passed but there was no real effort at implementation.

My State of Gujarat is heavily deficit in foodgrains production, to the extent of about 18 lakh tons and hence it is left to the mercy of the other surplus States for necessary food supplies. The magnitude of food deficit being every large, it will be extremely difficulty for the State to achieve self-sufficiency during the Fourth, Fifth or even the Sixth Plan period. There is inadequacy of irrigation facilities in Gujarat.

I live on the banks of the river Narmada and every year about 36 million acre feet of water flows down. This is equal to the flow in the Sutlej Beas and the Ravi rivers and will be enough to irrigate all the waters in Madhya Pradesh, Gujarat, and about seven lakh acres in Rajasthan, when the integrated system as proposed has been developed. Therefore the Narmada project should be at once taken into hand and implemented. Gujarat State has a long coast line of about 1,000 miles along the Arabian Sea with the Gulf of Cambay and Kutch. The coastal area has been surveyed by the specialist officers of the Indian Central Cocoanut Committee and the Arecanut Committee. In their report it has been indicated that there exists great potentiality for development of cocoanut plantations in the coastal tract of Gujarat.

14 hrs.

Adequate attempt does not appear to have been made for accelerating the programme of reclamation of ravine land, which is about 10 lakh acres in Gujrat. In view of the urgency of boosting up agricultural production in the State, stepping up of efforts in this direction is essential.

The country has been passing through a very crucial period in respect of supply position of foorgrains and rising spiral of prices. The food situation has not only considerably deteriorated, but has caused tremendous hardship to the people. The price of foodgrains has continued to rise and acute shortages have become a matter of constant worry to deficit States.

The critical food situation has brought to the lime light, lack of co-ordination between the Central and State Governments, and want of effective implementation of policy dicisions and programmes for stepping up food output, a problem which has been before the country ever since independence. A permanent solution of this very important problem lies in the adoption of a long-term national food policy,designed to achieve maximum production of foodgrains within the country and ensuring equitable and rational distribution of available supplies of foodgrains all over the seeds.

The country has not been able to turn the corner in regard to the food situation. So, to increase food production, I suggest the following.

The farmer should be provided with fertilisers, manures, loans or credit, plant protective chemicals and better seed.

Some sort of incentive to the farmers should be given to produce more and more progresssively.

Measures should be taken to discourage production of cash crops which the Government has been encouraging to earn foreign exchange.

Necessary technical advice should be given to the farmers to enable them to make the best use of their land:

Irrigation and water supply facilities should be increased and dependence on rains should be minimised

A scheme of insurance of crops should be evolved so that farmers feel confident in adopting new and improved methods of farming.

There should be rigid enforcement of some law restricting only a certain percentage of land for cash crops.

Agriculture, though it is one of the biggest industries in the country, has unfortunately not yet drawn enough attention. There is no strong farmers' organisation as such. We have a feeble Bharat Krishak Samaj, and I propose that we should have a very strong Bharat Krishak Samaj or some other organisation whereby the farmer's voice is heard in the country.

Shri Ranga Rao (Cheepurupalli): Food and agriculture have become the two most important problems which face our country today. We are taking important steps to solve this problem, and I do not think that we have progressed appreciably in these two fields. The problems as they arise are being tackled, but I fear that the way we are tackling this problem is a little bit discouraging. In view of the importance of this subject, it naturally follows that top priority should be given to it.

First we should think of crash programmes which will give us immediate results, at the same time keeping in view long-term programmes for the future. No one can deny the progress that we have made in agricultural development, but I still feel that with the limited resources at our command, the more frugal and intensive application of our resources at the basic levels will yield better results.

I was rather surprised when some hon. Member stated that we were lacking in moral strength. I personally feel that the Indian farmer is second to none, but it is an unfortunate fact that he dose not have the tools, the incentive, nor the finance to carry out agricultural operations as best as he can. For this there are various agencies through which we are providing facilities, but I personally feel, and I think I am not far wrong in feeling, that for the large majority of farmers this aid is beyond their reach.

I would class the needs of the Indian farmer under three broad heads. These are very necessary to make any singnificant progress in the shortest possible time

First and foremost are the tools with which he can improve his agriculture. You can classify his tools from the very ordinary steel ploughs to the rather sophisticated piece of machinery called the tractor. The second most important thing is irrigation, whether big or small, coupled with chemical fertiliser And the most important of all is agricultural credit to the small farmer.

As far as providing the farmer with tools is concerned, most of these modern implements from the pump to the tractor are beyond the reach of the small farmer; they are not readily available to him for the simple reason that he is too poor to buy them and too ignorant to use them. The reason for this is that the Indian farmer has been without these aids for centuries.

One way of combating this is supposed to be co-operative farming, which is supposed to make available to the farmer all the modern implements that would be necessary for him to improve his methods of agriculture. All these years we have seen what progress co-operative farming has made. As far as my knowledge goes, there has not been any

[Shri Ranga Rao].

significant advancement in that field. The reason probably is the inherent fear of the small farmer that by co-operative farming his basic ownership of the land may be jeopardised. I should say that the answer for this is service co-operatives on a country-wide basis. I honestly feel that it would be the perfect answer to providing specialised facilities to the farmer at all levels. In a small way, but very unofficially and informally, I have tried this out by getting together about half a dozen friends and collectively buying a tractor and its implements and so on. I can assure you that it has proved very popular. We are now thinking of forming such a society for the benefit of a larger number of farmers in our area. If government give serious consideration to the formation of service co-operatives on a countrywide basis, I am sure it will cause a revolution in our agricultural practices. Probably, the only impediment may be the availability of adequate funds. I am sure in an importtant matter like this, they will be able to find funds. If necessary the entire system of granting loans to individuals may be scrapped and those funds utilised for this purpose because service co-operatives do serve a much larger section than individual loans.

You all know the various steps we are taking for irrigation. We have gigantic schemes; we have medium, minor and so many other forms of irrigation. While these are going on, I would specifically mention whether it will be possible for us to tap sources which are generally not included under that head. For instance, I have with great success tried filtar points on the beds of rivers; I have done it myself; I have helped others to do it. Many of as, I am sure, know what a filter point is. It is one of the cheapest forms of irrigation. The ground water resources and water supply is so copious and continuous that it lends itself for large lift irrigation schemes. Probably, I have not made detailed studies of it; it will cost one-fifth of ordinary surface well to have a filter point and it can be developed on the banks of little streams and rivers in which there is not enough water except during the rainy season. I am sure it will form a very large supply of irrigation where there is no water.

The third and most important is agriculture credit. We may have a very impressive set of figures to show that so many crores and lakhs have been distributed. It may be true but if you go into the villages and look into the needs of the really small, really poor farmer, it is on very rare occasions that these men get any sizable credit. Even where credit is available through co-operatives or samitis, it is an unfortunate fact; that it is the comparatively richer and influential man in the area manages to get credit to buy a tractor or a pumpset. It is in this field government should take serious steps to see that the poor man gets credit rather than his richer counterpart.

Since you have rung the bell, I will not take much time. It is commonly felt that the Indian agriculturist is a very poor farmer. That is not so. If resources are made available, to him, he can show that even ten times the normal yield can be had without sophisticated or unavailable implements. My good friend Mr. Karuthiruman was mentioning that he grows nearly double what is grown in the surrounding areas or even much more. I also have a little claim in that regard. I can rightfully claim that the average yield of cane in my farm is between 60-70 tons in the midst of an area which yields only 15-19 tons per acre. It is not to blow my trumpet that I say this but to prove that these things can be done in similar conditions. I have also grown successfully the price competition crop of 129:5 tons per acre in 1962-63. This has not been done by any specialised method; it is because I have used large quantities of natural manure that were available together with fertilisers and adequate water. I did not have the advantage of any specialists except the basic advice

given to me by the agriculture department nor did I use machines or various other things which are not available to any other farmer in the country. With these words, I support these demands.

Shri Kappen (Muvattupuzha): Mr. Deputy-Speaker, it is with a sense of relief that I rise to support this demand. The relief has come from the the statement made by the minister yesterday that he is setting about widening the wheat zone. I think that the same idea should also be applied to rice zones also very soon. In circumstances where supply falls short of demand and in a developing economy such a situation is frequent and people will have to tighten their belts occasionally. Government will have to introduce some sort of a control and regulation but they should not be allowed to continue for more than what is absolutely necessary. So, I take this as a good trend and I hope that the present zones with regard to rise will soon disappear. I carefully went through the pamphlet published by the ministry entitled programmes of agricultural production, 1966-67. I fear that the Ministry is putting the cart before the horse. The programmes are very good; we have gone through three Five Year Plans, and we have invested a lot of money for agricultural production. Still, we have to depend upon the charity of other countries for food. Of course, the unprecedented drought which was experienced in many parts of the country is mainly responsible for the present food situation. Even then, we have fallen short of the target we have fixed in the last two five Year Plans except the first Five Year Plan. What is the reason? Not because our Plans were not good. Mr. John Freeman, the U S. Secretary for Food and Agriculture, in his speech delivered at the Overseas Press Club, said that India can obtain self-sufficiency in food in five years provided the Government's programmes are implemented. I would underline the word 'implemented'. Implementation is the important thing.

Our experience is that the administrative machinery which is there for implementation has always failed. Even though we have covered the country with national extension blocks, still, we have failed to energise the farmer and induce him to produce more. What is being done to gear up this administrative machinery? It is stated in the pamphlet that the administrative machinery and the extension agencies are being reoriented to give support to the new programme. What exactly this House wants to know is, how this reorientation is being done, because that is the most important thing.

Another thing that I found when reading through the pamphlet is that certain important things have been ignored or have been forgotten by the Ministry. Some mention was made here yesterday and today about those matters, that is, soil survey, soil testing and leaf testing. You cannot produce everything in every soil. For example, you cannot produce in Delhi pepper; whatever may be the quantity of improved plant and material you may supply and whatever may be the quantity of fertilisers you may put in, you cannot produce pepper economically in Delhi. So, it is very clear that you cannot produce every crop in every soil. Therefore, it is highly necessary for any scheme of agricultural production that the land best suited for each crop is found out. That can be done only by an extensive soil survey, and once the land suited for each crop is found the next thing to be done is to analyse the soil and find out in which element or material that soil is deficient. For example, if a soil is rich in potash, it is not necessary to add potash to that soil. If you do that, the growth of the plant will be retarded. Just as a man who consumes carbohydrates alone will get diabates, so also, the plant will get sickly. Therefore, it is highly necessary to find out what element the soil is deficient in. Then,

[Shri Kappen].

add fertiliser to that, which is nitrogenous or non-nitrogenous. Otherwise, it will be a huge waste of this material which is in short supply. I do not find anything about this in the pamphlet.

The third necessary thing is to test the leaf. Leaf testing will show you what particular element is being drawn by the plant in larger quanties from the soil. If it is nitrogen, you can very well see that land will become depleted of nitrogen. Then, supply it. Thus, if such a judicious appliaction of manure is done, then the production can be increased.

Having said generally about these points, I want to make special mention about certain specific matters. The first thing I have to mention is about the coconut. India is deficit in the production of coconuts. Every year we are importing Rs. 15 crores worth of copra and coconut products. The demand for this commodity is increasing year by year. This is a big drain on our foreign exchange resources. Unless the production can be increased, import will have to be allowed in larger and larger quantities every year. That should mean a drain on our slender foreign exchange. The average production per tree in Kerala, which supplies 80 per cent of the coconuts and coconut products in the country, is 40 nuts per year; that is, 3,000 nuts per acre, whereas production in some of the far-eastern countries like Philippines is 60 to 100 nuts. With a little more manuring and better agricultural practices, our production can very well be increased from 40 to 60 or 70 nuts per tree per year.

Shri D. C. Sharma (Gurdaspur): Why are you not in the Ministry?

Shri Kappen: I am going to give the reasons. Coconut is not a regular plantation crop. It is being cultivated in road margins, on river banks and in the bunds of paddy fields, etc. 90 per cent of the farmers are poor. So, they cannot afford to manure this tree sufficiently. Not only do they not manure properly but they exhaust the soil also and exhaust the crop by undertaking the cultivation of tapioca and other things, so much so that the soil is depleted of the necessary manure, and the production goes down. Further, more than 50 per cent of the coconut trees in Kerala, which supplies the bulk of the coconut in India is the more than 50 years old, and it is calculated that 50 years is the economic life of the coconut tree. So, it is necessary that these trees ought to be replanted and therefore, I would request, in the interests of the country, that the Ministry should take up the question seriously, and a Board like the Rubber Board may be established for coconut, so that particular attention could be paid to this matter. For planting and replanting, necessary subsidy and necessary loans, as is being done in the case of rubber, may also be given to the coconut cultivators. Unless this is done, we will have to depend upon imports in this regard.

I would submit one more thing before I close, and that is with regard to subsidiary foods. There is some mention about fisheries being developed in the country. There is large scope for fishery development in Kerala, especially off-shore fishing. I have got a scheme with me, but since there is no time, I do not go into it in detail. But I would tell the Ministry that with a small investment of Rs. 9 crores, the present production of fish, the landing of fish, can be trebled, so much so that the tragets fixed can be reached very easily.

Shri K. N. Pande (Hata): Frogs.

Shri Kappen: I have no time. With regard to dairy development, so far as Kerala is concerned, the difficulty is the absence of proper fodder. In the Kerala high ranges you have got the grasslands; these grasses can be cut and converted into fodder, and by cheap transport it can be transported to the various parts of the State, so that the State which is the lowest in the consumption of milk

can have the necessary quantity of milk.

श्री बसवन्त (थाना) : उपाध्यक्ष महोदय, मैं इस मांग का समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं और डेरी-विकास के सम्बन्ध में कुछ बोलना चाहता हूं । मेरे साथी श्री मानसिंह पटेल ने इसके सम्बन्ध में जो बातें कही हैं, उसके आगे मैं कुछ अपनी राय रखना चाहता हूं । दुग्ध व्यवसाय खेती का बहुत महत्वपूर्ण अंग है । इस व्यवसाय के लिये तीनों पंचवर्षीय योजनाओं के लिये 40 करोड़ रुपया खर्च हुआ है । भारत में जो दूध समस्या है इस का जो सर्वे हुआ है, उसके अनुसार 1947 में साढ़े पांच औंस दूध प्रति इन्सान को मिलता था, 1961 में यह पांच औंस हुआ और जब दिल्ली डेरी के आंकड़े हम देखें तो पता चलता है कि सन् 1961 में उन्होंने 268 लाख लिटर दूध बेचा, 1962 में 353 लाख लिटर बेचा, 1963 में 430 लाख लिटर दूध बेचा और 1964 में 263 लाख लिटर दूध बेचा । इसका मतलब है कि 1961 से हम पीछे आये हैं । तो 40 करोड़ रुपया खर्च करके हम पीछे आये हैं, क्यों पीछे आये हैं ? या तो हमारा जो दृष्टिकोण होगा, वह गलत होगा, उसको सुधारना चाहिये, नहीं तो तीसरा सर्वे हो जाएगा तो चार औंस दूध मिलने का समय, इससे पता चलता है, आ जायगा ।

इस 40 करोड़ से हम ने सारा साजो-सामान, बिल्डिंग, नौकर की तनख्वाह पर खर्च किया और जो कुछ पशु संशोधन का काम चलता है, मैंने पूसा में देखा, करनाल में देखा, इनमें सिर्फ गाय के ऊपर ही संशोधन चलता है । मेरी कोई ऐसी शिकायत नहीं है कि गाय के दूध पर संशोधन न करें, मगर उसके साथ साथ यह भी देखें कि दिल्ली में जो दूध आपने बेचा है उसमें से 2 करोड़ 54 लाख 68 हजार लिटर भैंस का दूध है और 8 लाख 70 हजार लिटर गाय का है, इससे पता चलता है कि 30 फ़ीसदी सिर्फ गाय का दूध हम बेचते हैं और 70 फीसदी भैंस का बेचते हैं । मगर इसके मुताबिक हम जब अनुसन्धान करते हैं तो भैंस के ऊपर कोई अनुसन्धान नहीं करते हैं । यही एक मूलभूत इसमें तथ्य है । इसमें दूध के कम होने वाली बात है ।

मैं तो एक दुग्ध व्यवसायी हूं और बम्बई की जो योजना है सेवा संघ की, उसमें मेरा 100 लिटर के ऊपर दूध प्रतिदिन जाता है, तो मैं कोई स्वार्थ भावना से अपने विचार व्यक्त नहीं कर रहा हूं, बल्कि मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि गाय के ऊपर आप अवश्य संशोधन करें, मगर जैसी कि हिन्दू भावना है कि हम गाय को कभी भी कसाईखाने में नहीं भेजते चाहे वह अनुत्पादक हो, परन्तु भैंस यदि अनुत्पादक हो जाय तो भले ही चली जाय । इस व्यवसाय में यही कठिनाई है कि गाय जब अनुत्पादक हो, तो उसका फैसला कैसे हो, यह कहीं भी नहीं लिखा है । इसी लिये इसमें रुकावट आ गई है । विदेशों में यह स्थिति नहीं है, वहां तो गाय यदि अनुत्पादक हो जाय तो उसको कसाई खाने में भेजना उन्होंने कभी बहिस्कृत नहीं माना, यही उसका बहुत बड़ा असर है । मेरा इसमें यही सुझाव है कि जैसे हम गाय के ऊपर संशोधन करते हैं, वैसे ही हमें भैंस के ऊपर संशोधन करना चाहिये तो यह जो दूध की कमी होती चली जा रही है वह रुक सकेगी ।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूं कि बाजार में जो चीज बेचनी होती है उस पर खर्च का दाम लगा कर बेचा जाता है, मगर दूध के बारे में मुझे दुख से कहना पड़ता है कि सोडा वाटर की बाटल में जो पानी आता है, उससे दूध का दाम कम है । आप कहें कि पानी से सस्ता दूध बेचो, तो दुनिया में, उपाध्यक्ष महोदय, ऐसी बात कहीं नहीं हुई, इस लिये हमें उत्पादकों को दूध का उचित मूल्य देना चाहिये । यदि हम उनको उचित मूल्य नहीं देंगे तो आज इन्सान के लिये हमें दूध की जितनी जरूरत है, वह पूरा होना

[श्री बसवन्त]

मुश्किल हो जायगा, और इस दूध की कमी का यही सबसे बड़ा कारण है।

तीसरी बात, उपाध्यक्ष महोदय, मुझे यह कहना है कि अभी 1966-67 के बजट में हमने कुछ डेरी विकास के कार्यों के लिये देखा कि 9 करोड़ रुपया उन पर खर्च करने के लिये रखा है। मेरे इस के सम्बन्ध में तीन-चार सुझाव हैं। सहकारिता की जो रिपोर्ट निकली है उसमें एक तो यह लिखा है कि प्रारम्भिक दुग्ध संघों के जरिये दूध को बढ़ाना है और दूसरे उसमें यह लिखा है कि किसी भी परिवार को मवेशी खरीदने के लिये तीन मवेशियों से अधिक के ऋण पाने का अधिकार नहीं होना चाहिये। इस तरह से इसमें रुकावट डाली गई है, लेकिन अब चूंकि ये दोनों विभाग एक हो गये हैं इसलिये सहकारिता में एक परिवार को तीन से अधिक मवेशी खरीदने के लिये जो ऋण देने से मना किया गया है इसको हटाना चाहिये।

इसके साथ मैं यह भी बतलाना चाहता हूं कि जो हीरेन घाट, कलकत्ता में, आरे, बम्बई में और माधव नगर, मद्रास में जो कुछ डेरी का प्रबन्ध किया गया है, उसमें आरे में 1 लाख 16 हजार लिटर दूध आता है तथा हर एक आदमी के पास, व्यक्तिगत डेरी वालों के पास 80 से ऊपर मवेशी हैं तो इसके मायने 400-500 लिटर है, तो वहां पर यदि सहकारिता से दूध बेचने जायं और तीन के ऊपर भैंस खरीदने के लिये कर्जा न मिले तो यह समाजवाद के साथ चलने की बात नहीं है और न दूध बढ़ाने वाली बात हो सकती है। इसलिये मेरा सुझाव है कि इस को हटा देना बहुत जरूरी है।

इस समय सहकारिता के आधार पर 11 करोड़ रुपये का जो दूध का काम चल रहा है, उसमें से 7 करोड़ रुपये का दूध तो गुजरात ने ही दिया है, वहां के 6 हजार किसानों ने प्रतिदिन ढाई लाख लिटर दूध बेचा, तो इसका मतलब है कि एक आदमी के पीछे चार लिटर दूध जाता है। वहां सहकारी संघों के जानवरों के खाद्यान्नों के लिये पिछले साल कुछ बन्दोबस्त किया गया, लेकिन अभी भी इसमें काफ़ी कमी है। वहां पर आप जहां जहां से दूध इकट्ठा करना चाहते हैं, वहां पर जो मिल्क-शेड हैं, उस पर ठीक ढंग से ध्यान देकर खाद्यानों की जरूरत पूरी करने के लिये कारखाने खोले जाने चाहियें।

एक बहुत जरूरी बात मैं हरे चारे के बारे में कहना चाहता हूं। हरे चारे की व्यवस्था होनी चाहिये। मैंने पूसा में कुछ बरसीन घास, गजराज घास तथा नेपियर घास देखी, लेकिन उस तरह की घास मैंने किसी भी ब्लाक खंड में नहीं देखी, दो एकड़ भूमि में भी इस प्रकार की घासों की परियोजना नहीं है। इसलिये डेरी विभाग को सोचना चाहिये कि जहां जहां से दूध आता है वहां पर हम किस रीति से हरी घास की परियोजना लगायें। ये जो तीन शहर हैं बम्बई, कलकत्ता और मद्रास यहां अच्छे अच्छे जानवर जाते हैं। वहां जाकर देखा गया है कि जब वे दूध देना बन्द कर देते हैं तो उनको कसाइयों के हाथ बेच दिया जाता है। किसी को उनको खरीद कर रखने की सुविधा नहीं है। इसलिए महाराष्ट्र गवर्नमेंट ने एक बहुत अच्छा काम किया है। उसने एक हजार जानवर ग्रामीण जनता को देहातों में देने का फैसला किया है ताकि इनको उन संस्थाओं को दिया जा सके जिन्होंने अच्छा काम किया है। इन जानवरों को वह उन्हें पालने के लिये देना चाहती है। इसके दो लाभ होंगे, एक तो यह कि जो अच्छा दूध देने वाले जानवर हैं वे बच जायेंगे और दूसरे जो संस्थायें दूध इकट्ठा करने का काम करती हैं उनके लिए काफी जानवर हो जायेंगे और वे काफी मात्रा में दूध इकट्ठा कर सकेंगी। इस योजना को यदि अच्छी तरह से चलाया जाए तो जानवरों का जो कत्ल हो रहा है

उस पर रुकावट लग जाएगी । मैं चाहता हूं कि इस ओर भी मन्त्रालय ध्यान दे तो अच्छा होगा ।

अनाज के बारे में एक आखिरी बात कह कर मैं समाप्त करता हूं । धान का भाव आंध्र में 39 रुपये प्रति क्विंटल है, बिहार में 42 रुपये प्रति क्विंटल है, उड़ीसा में 36 रुपये है, मध्य प्रदेश में चालीस रुपये है, केरल में 43 रुपये है, मैसूर में 37 रुपये है और महाराष्ट्र में 45 रुपये प्रति क्विंटल है । अब आप देखें कि जब मवेशी के लिए खुराक हम लेने जाते है तो वह हमें सत्तर रुपये प्रति क्विंटल के भाव पर मिलती है । ऐसी स्थिति में कैसे अनाज की अधिक पैदावार हो सकती है । आप कमिशन्ज बिठाते हैं कीमतों को तय करने के लिए । आपने झा कमीशन बिठाया । उसने पिछले तीन साल का एवरेज निकाल कर के धान का भाव 34 रुपये और 41 रुपये प्रति क्विंटल निकाल दिया । इससे उपज बढ़ने वाली नहीं है । हमारे सुब्रह्मण्यम् साहब ने सितम्बर में डिबेट का जो रिप्लाई दिया था उसमें उन्होंने कहा था कि हम चीप ग्रेन पालिसी को चलाना चाहते हैं । यह भी एक कारण है कि हमारा उत्पादन नहीं बढ़ा है । मैं सुझाव देना चाहता हूं कि चीप ग्रेन जो पालिसी मन्त्रालय के सामने है, उसको मन्त्रालय को निकाल देना चाहिये ।

Shri H. P. Chatterjee (Nabadwip): Mr. Deputy-Speaker, Sir, I would have liked Mr. Subramaniam to be present here because I shall refer to him for many things. But he is not here. Let the Deputy Minister and the Minister of State who are present report to him. I shall speak about conservation of soil. It is a very important subject. If we overlook it, all our enterprise for growing more food will come to naught. Soil erosion is a very dangerous thing, much more dangerous than even nuclear fission. Many established civilisations had perished because they failed to have control over the soil. That happened in Mesapotamia in the Euphretes and Trigris rivers. All their irrigation dams vanished. That happened in North China and Persia also. Many civilisations perished because the most precious asset—control over soil—was lost. That is going to happen in our country too. This must be looked into very carefully.

We have spent Rs 1310 crores on major and medium irrigation schemes and another Rs. 2200 crores on power schemes, half of which are hydro-power projects. That means, we have spent about Rs. 2410 crores on river valley projects. But the water potential created at enormous cost is very fast dying. Let me give an example. Unfortunately Mr. Subramaniam is not here. It is very important. In the DVC—Damodar Valley Corporation—the siltation is about 3 acre-feet per square mile annually. This is not only four times the original calculated rate, but twice that in Bhakra catchment, which was so far regarded as one of the worst. The situation in Mayurakshi and Kangsabati is much worse in the matter of siltation. In the latter, the entire forest vegetation is positively denuded and the menacing gullies at the foothills are to be seen to be believed.

The Panchet Reservoir Sedimentation Surveys carried out in 1962 under a C. B. I. P. scheme have shown that from 1956 to 1962, i.e. in 6 years, 29 per cent of the dead storage and 8·5 per cent of the live storage have been filled up. At this rate, by 1977 i.e. in 21 years after the construction, the whole of the dead storage will be filled up and 30 per cent of the live storage depleted. By 1990, the whole of the live storage will be filled up.

I have toured many of these areas myself. This is an important subject. Along with Dr. Gorie I toured many places and studied it. For 7 days I toured in the DVC catchment area and the things that were shown to me were really horrible. All the precious dams will be silted up in no time. Dr. Gorie had estimated that the life of the Pan-

[Shri H. P. Chatterjee]

chet dam will be 25 years according to one calculation and 32 years according to another. The sedimentation surveys have shown that it is coming to be true. We are hoodwinked by some experts. I discussed this matter with Dr. Rao and others. When calculating, they take the whole flood zone. That should not be done, because it is the dead storage and live storage that matters. Our experts are aware of these things. We have our technical experts and our knowhow also. But unfortunately our administrative people think that soil conservation is almost a superstition and why should we go in for that spending money over afforestation and other things?

I attended the Srinagar conference on soil conservation measures in river valley projects held in June 1964. There this matter was discussed. According to the government's calculation, for 25 major projects, the total catchment area is 3 lakh square miles, out of which 30,000 square miles, *i.e.* about 10 per cent, require immediate soil conservation treatment. That is their calculation, but it may be more than 10 per cent. The money necessary for that is Rs. 363·40 crores. But we sanctioned not more than half a crore in the first two plans and only Rs. 11 crores in the third plan. But our experts say that Rs. 363·40 crores will be required, if we want to keep alive all these dams and utilise them. What is the good of going in for further irrigation if we cannot preserve the irrigation, we already have? Our irrigation potential is dying and we are talking of irrigation to increase our food. This imbalance in nature is taken note of everywhere in the world. Here also, when Mr. Patil was the Agriculture Misnister, he used to say like that. He used to quote Mao Tse-tung about the 1/3: 1|3: 1|3 ratio; one-third under agriculture, one-third under afforestation and one-third fallow. This is the system which we have in our country, that some fallow is necessary. There was the national Palicy enunciated in 1952. Our national forest policy was that we must bring in one-third of our land under afforestation of which sixty per cent will be in the hill areas. This is our national policy but we have not followed it up. The Centre is giving money. The Centre gives funds. But the States do not carry it out. So I request that his subject of 'Forests' may be made a concurrent subject. Otherwise the whole nation suffers. In respect of river valley schemes, the provision is about Rs. 2400 crores which we have already spent. We are going on spending. It may be about Rs. 3,000 crores and 10 per cent of that will be Rs. 300 crores. 10 per cent was also the recommendation made in the Bhuvaneswar conference where some of our Central Ministers and State Ministers participated. Their recommendation was also 10 per cent, but we are not doing this.

Mr. Deputy-Speaker: The hon. Member's time is up. (*Interruption*) You are the second independent Member.

Shri H. P. Chatterjee: I am the only Parliamentarian who speaks about these matters.

Mr. Deputy-Speaker: Please conclude: there are other Members waiting.

Shri H. P. Chatterjee: If you disturb me it is very difficult for me to formulate ideas.

An hon. Member: Other Members should be given equal opportunities.

Mr. Deputy-Speaker: Other Members are also waiting.

Shri H. P. Chatterjee: We have, in our Damodar Valley Corporation, followed the Tennesse Valley Scheme of the U.S.A. There is 54 per cent afforestation already there. Their precipitation was only 40 inches and here we have 50 to 60 inches. As far as afforestation is concerned it is not more than 30 per cent, but that also is not good forest. In forest parlance it is called denuded forests. The trees are cut down. Here in this Tennesse Valley they had 54 per cent afforestation. Even then they had gone in for further afforestation. They said: 'Have further affforestation or be doomed.'

The figures of the forest area all over the world are like this: It is 41 per cent in Europe, though highly industrialised. In North America it is 33·3 per cent; in Central and South America it is 38·9 per cent; in U.S.S.R. it is 45 per cent; and in Japan it is 67 cent; but in India it is only 22 per cent.

Mr. Deputy-Speaker: The hon. Member's time is up.

Shri H. P. Chatterjee: We will be nowhere if we don't go in for afforestation. I have only one sentence, Sir. Dr. Gorie gave this scheme for the D.V.C. namely, that for 15 years, by spending Rs 19·16 crores, in the tenth year a profit of Rs. 1½ crores will come. This is an investment also. If we go on doing this, it will also give employment to our people and this will also save our dams, but we are not doing this. We are spending so much money in the dams, and they will be silted up in no time if we do not carry out proper soil conservation works.

श्री योगेन्द्र झा (मधुबनी) : उपाध्यक्ष महोदय, तीन उद्देश्यों को सामने रख कर समीक्षा करने पर हमारी कृषि नीति बुरी तरह असफल रही है । ये तीन उद्देश्य हैं—अन्न में आत्म-निर्भरता, कृषि पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष निर्भर व्यक्तियों के लिए उन्नत जीवन स्तर तथा ग्रामीण आर्थिक जीवन में समानता । आत्म-निर्भरता के सम्बन्ध में मैं आगे कहूंगा ।

पहली बात कृषि पर निर्भर लोगों के जीवन स्तर में उन्नति के बारे में मैं कहना चाहता हूं । जापान का उदाहरण सामने है । सिर्फ कृषि की उन्नति से चाहे प्रति एकड़ पैदावार कितनी भी बढ़ जाय, कृषि पर निर्भर व्यक्तियों के जीवन स्तर को ऊंचा नहीं उठाया जा सकता । आज से पांच साल पहले के जापान का आंकड़ा है कि जापान के 40 प्रतिशत निवासियों ने कृषि के द्वारा राष्ट्रीय आमदनी का सिर्फ 20 प्रतिशत हिस्सा पैदा किया और वहां एक किसान परिवार अपनी कुल आमदनी का सिर्फ 1/3 हिस्सा कृषि से पैदा करता है और 2/3 हिस्सा दूसरे सहायक धंधों से पैदा करता है । इसके बाद भी आज जापान में नवयुवकों के बीच कृषि पर निर्भर रहने के लिए कोई आकर्षण नहीं रह गया है और एक हमने वाली बात है । खेती में आकर्षण न रहने के कारण आज जापान की युवतियां जापान के उन युवकों को पसन्द नहीं करतीं जो कृषि पर निर्भर रहते हैं और हमारे यहां भी यह बात होने लगी है । उच्च जातियों के लोगों में जिनका भाई कम पढ़ा लिखा है या कृषि पर निर्भर रहने वाला है उनकी शादियों के लिए वैसे लोग नहीं आते जैसे कि नौकरी और दूसरे धंधों में जाने वालों के लिए आते हैं । तो इस तरह से प्रतिभा का गांवों में विसर्जन होता जा रहा है । यह एक स्वाभाविक खतरा खेती के ऊपर है । अगर खेती पर निर्भर रहने वालों का जीवन स्तर ऊपर नहीं उठा तो यह खतरा है जिसकी ओर मैं इशारा करना चाहता हूं । कहा जाता है कि फसलों की कीमतें बढ़ गईं । लेकिन कीमतों से किसानों के जीवन स्तर को नहीं आंका जा सकता क्योंकि किसान जो पैदा करता है उसकी सारी उपज का विनिमय मूल्य नहीं होता । एक किसान जब अपनी जरूरत से कम पैदा करता है तो चाहे उसका दाम कुछ हो जाय उसके लिए तो उतना ही है जितना कि अनाज का वजन है । पैसे से उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता क्योंकि उसका विनिमय मूल्य नहीं होता । सिर्फ दस प्रतिशत किसान ऐसे हैं जो अपनी जरूरत से ज्यादा पैदा करते हैं और मूल्य वृद्धि से अधिक से अधिक लाभ वही उठा सकते हैं । 90 प्रतिशत किसानों के जीवन स्तर को उठाने के लिए मूल्य वृद्धि कोई उपाय नहीं है ।

14.57 hrs.

[SHRI SONAVANE *in the Chair*]

इसके बाद मैं यह कहना चाहता हूं कि आत्म-निर्भरता के उद्देश्य में हम बुरी तरह असफल रहे हैं । इस साल की जो हालत है

[श्री योगेन्द्र झा]

भगवान् जाने क्या होगा । पिछले साल 64–65 में हमने 88 लाख मिलियन टन से अधिक अनाज पैदा किया और 6 मिलियन टन विदेशों से मंगाया । कुल 94 मिलियन टन हुआ । इस साल जबकि 75.5 मिलियन टन देश में पैदा करने जा रहे हैं और अधिक से अधिक आठ मिलियन टन विदेशों से आने की सम्भावना है तो मेरे अनुमान में लगभग 11 मिलियन टन खाद्यान्न की कमी पिछले साल के मुकाबिले में इस देश में रहती है । जबकि जनसंख्या वृद्धि के कारण अधिक अन्न की आवश्यकता है । भगवान् जाने कि इसका क्या असर देश के जीवन पर, आर्थिक जीवन पर और दूसरी चीजों पर पड़ने वाला है । ऐसा नहीं है कि कृषि की उपज बढ़ी नहीं । मैं मानता हूं कि उपज बढ़ी है । 1949–50 में खाद्यान्न का उत्पादन 54.05 मिलियन टन था । वह बढ़ कर 1964–65 में 88.40 मिलियन टन हो गया । 1950–51 में खाद्यान्न का उत्पादन 50.02 मिलियन टन था जो 1965–66 में 75.09 मिलियन टन हो गया । तो इस तरह से एक अच्छे वर्ष का दूसरे अच्छे वर्ष से मुकाबिला करने पर 34.35 मिलियन टन ज्यादा उपज में वृद्धि हुई है और एक बुरे वर्ष का 1950–51 जो बुरा वर्ष था उसका एक बुरे वर्ष से, 1965–66 से, मुकाबिला करने पर 25.7 मिलियन टन अधिक उत्पादन हुआ है । लेकिन यह कबूल करना पड़ता है कि इसके बावजूद भी हम आत्म-निर्भरता की दृष्टि से बहुत पीछे हैं । आत्म-निर्भरता की बात जब हम करते हैं तो हमें चार बातों को सामने रखना होगा—वर्तमान आयात, कम खाने वाली जनसंख्या, बढ़ने वाली जनसंख्या और प्रतिकूल मौसम । इन चार बातों को नजर में रख कर ही हम आत्म-निर्भरता की बात कर सकते हैं । जब तक अपनी वार्षिक आवश्यकता से कम से कम 15 प्रतिशत अन्न अधिक हम नहीं पैदा कर लेते तब तक हम आत्म-निर्भरता की बात नहीं कर सकते, यह एक पवित्र इच्छा मात्र रहेगी । चौथी योजना की अवधि में खाद्यान्नों की निम्नतम आवश्यकता 560 मिलियन टन होगी और पांच वर्षों में अगर चार वर्ष मौसम बहुत अच्छा रहे तथा एक वर्ष मौसम सामान्य रहे तब भी हम पांच वर्षों में कुल अधिक से अधिक 540 मिलियन टन अनाज पैदा कर सकते हैं । इस तरीके से मैं देखता हूं कि हम चौथी योजना के अन्त तक भी आत्म-निर्भर नहीं होने जा रहे हैं । इस की पुष्टि में मैं कुछ आंकड़े आपके सामने रखना चाहता हूं । पहली पंचवर्षीय योजना काल में यानी पांच वर्षों का कुल उत्पादन 310.92 मिलियन टन था । दूसरी तथा तीसरी योजना में क्रमशः 363.48 मिलियन टन तथा 405.6 मिलियन टन थे । पहली योजना के 5 वर्षों के कुल उत्पादन की तुलना में दूसरी योजना के पांच वर्षों का कुल उत्पादन 52.36 मिलियन टन बढ़ा और इसी तरह तीसरी योजना काल में दूसरी योजना काल के कुल उत्पादन की तुलना में 41.68 मिलियन टन उत्पादन बढ़ा । सिर्फ वार्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये चौथी योजना के 5 वर्षों में तीसरी योजना के पांच वर्षों के कुल उत्पादन से 155 मिलियन टन अधिक उत्पादन होना चाहिए ।

15 hrs.

दूसरी तथा तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में हमारा वार्षिक औसत उत्पादन क्रमशः 62.18, 72.69, 81.1 मिलियन टन थे । चौथी योजना की अवधि में मात्र वार्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये वार्षिक औसत उत्पादन 112 मिलियन टन होना चाहिए ।

62.18 मिलियन टन से 72.69 तथा 72.69 से 81.1 मिलियन टन उत्पादन बढ़ने में एक क्रम है । दूसरी योजना में वार्षिक औसत उत्पादन पहली योजना की तुलना में 10.51 मिलियन टन अधिक रहा तथा तीसरी योजना में वार्षिक औसत

उत्पादन दूसरी योजना की तुलना में 8.32 मिलियन टन अधिक हुआ । वार्षिक जरूरत को पूरा करने के लिये चौथी योजना में तीसरी योजना की तुलना में वार्षिक औसत उत्पादन 31 मिलियन टन अधिक करना होगा ।

अब तक के अनुभवों के आधार पर निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सामान्य प्रयत्नों से हम इन लक्ष्यों को पूरा करने में असफल रहेंगे क्योंकि तीन योजनाओं मे आधार वर्ष 1949–50 की तुलना में हमने अपनी वार्षिक औसत उत्पादन क्षमता सिर्फ 17 मिलियन टन बढ़ायी है ।

आधार वर्ष की तुलना में तीसरी योजना का वार्षिक औसत उत्पादन 25.66 मिलियन टन अधिक है । निष्कर्ष यह है कि 15 वर्षों में हमने अपनी उत्पादन क्षमता जितनी बढ़ाई है उससे 20, 25 प्रतिशत अधिक उत्पादन क्षमता 5 वर्षों में बढ़ानी है । अगर हम आत्म-निर्भर बनना चाहते है तो चौथी योजना के अन्तिम वर्ष तक हमारी उत्पादन क्षमता 140 मिलियन टन होनी चाहिए । अभी लक्ष्य 125 मिलियन टन का रखा गया है । मुझ को तो इस 125 मिलियन टन के लक्ष्य के पूरा होने में भी सन्देह है । इन सभी तथ्यों को जान लेने पर मेरा निश्चित मत है कि चौथी योजना की अवधि में कम से कम 20 मिलियन टन तथा अधिक से अधिक 40–50 मिलियन टन खाद्यानों का आयात करना होगा । यह एक भयावह स्थिति है ।

सभापति महोदय, मैं यहां सरकार के सामने यह बात कहना चाहता हूं कि सरकार सामान्य प्रयत्नों से इस समस्या का समाधान करने में असफल रहेगी । जब तक देश में एक भूमि क्रान्ति नहीं होगी, जब तक देश के अन्दर जमीन का सम विभाजन नहीं होगा जब तक उस वर्ग के लोगों के अधिकार से जमीन हटायी नहीं जायगी जिस वर्ग को कि जमीन से कोई प्रेम नहीं है जिनका कि खेती धंधा नहीं है और जिनके लिए कि कृषि का धंधा दिल बहलाव मात्र है तब तक इस देश की खाद्य समस्या का समाधान नहीं किया जा सकता है । आज हालत क्या है ? अगर आप चाहते हैं कि इस देश की बहुसंख्या इस देश के बसने वाले अधिकांश लोग अपनी शिथिलता को छोड़ कर खेतों में जायं, परिश्रम करें, तो उसके लिए आप को धक्का देना पड़ेगा । कभी कभी हम देखते हैं कि जब मोटर सैल्फ स्टार्ट नहीं होती, हैंडिल से नहीं चलती है तो उसको चलाने के लिए धक्का देना पड़ता है उसी तरह से इस समाज को धक्का देने की जरूरत है । जब यह सैल्फ़ स्टार्ट नहीं होती, यह हैंडिल से चलने को तैयार नहीं है तो उसको धक्का देने की जरूरत है । अगर आप ने योजनाबद्ध तरीके से समाज के पुराने सांचे को नहीं तोड़ा तो समय आने वाला है जब समय खुद उस सांचे को तोड़ देगा और देश के अन्दर अराजकता उत्पन्न हो जायगी जिसके ऊपर हमारा कोई नियन्त्रण नहीं रहेगा । अगर देश अन्न के मामले में आत्म-निर्भर नहीं बना तो हम अपनी आजादी की रक्षा नहीं कर सकते हैं, जनतन्त्र की तो बात दूर रही ।

इन सब बातों को कहने के बाद मैं सरकार के समक्ष एक 19-सूत्री कार्यक्रम पेश करता हूं और आशा करता हूं कि सरकार उस पर ध्यान देगी और अमल में लायेगी :—

1. क्रान्तिकारी भूमि सुधार ।
2. अलाभकर जोत पर से लगान हटे ।
3. हो सके तो बिना सूद अथवा नाम मात्र के सूद पर पर्याप्त ऋण व्यवस्था । चौथी योजना में 900 करोड़ से शुरू कर 1500 करोड़ तक वार्षिक ऋण का प्रबन्ध हो ।
4. लघु सिंचाई को प्राथमिकता ।
5. बड़ी सिंचाई योजनाओं द्वारा उत्पादित सिंचाई क्षमता का पूर्ण उपयोग

[श्री योगेन्द्र झा]

तथा नई सिंचाई योजनाओं से तीन वर्ष तक सिंचाई के लिए मुफ्त पानी ।

6. सिंचाई के लिये व्यापक पैमाने पर सस्ती बिजली उपलब्ध किया जाना । बिजली की दर अधिक से अधिक 9 पैसे प्रति यूनिट हो ।

7. समय पर उन्नत बीज का वितरण ।

8. सुथरे यन्त्र की आपूर्ति ।

9. उर्वरक, कम्पोस्ट तथा हरी खाद का कम से कम वर्तमान उत्पादन से तीन गुना अधिक उत्पादन ।

10. कृषि योग्य भूमि को खेती में लाना । इसके लिये भूमि सेना का गठन ।

11. कृषि बीमा जिस में फसल तथा पशु दोनों शामिल हों ।

12. 1 लाख तथा इससे अधिक जनसंख्या वाले शहरों में कानूनी राशनिंग ।

13. खाद्यानों का पूर्ण राजकीय व्यापार ।

14. चावल मिलों का तुरन्त राष्ट्रीयकरण ।

15. भोजन की आदत में परिवर्तन ।

16. दूध, फल, सब्जी, मछली, मुर्गी तथा सुअर पालन का व्यापक कार्यक्रम तालाबों में अधिक मछली उत्पादन के लिए पैकेज कार्यक्रम हो. . .

सभापति महोदय : माननीय सदस्य का समय समाप्त हो गया है । मैं दो, तीन बार घंटी बजा चुका हूं । वे मेहरबानी करके बैठ जायें ।

श्री योगेन्द्र झा : बस तीन और कहने रह गये हैं, उन्हें कह कर मैं अपना स्थान ग्रहण कर लूंगा ।

17. कीड़े मकोड़ों तथा चुहा, बन्दर एवं अन्य आवारा पशुओं से फसल की रक्षा का प्रभावशाली कदम ।

18. जनसंख्या वृद्धि को रोकने का प्रभावशाली उपाय अपनाया जाय ।

19. कृषि योजनाओं को कार्यान्वित करने वाले सरकारी यन्त्रों में आमूल परिवर्तन हो ।

Some hon. Members *rose*—

Mr. Chairman: Shri Uikey—I think he is not present in the House—Then, Shri Chandak—He is also not present—Then Shri Sivamurthi Swamy—

Shri Sivamurthi Swamy (Koppal) *rose*—

Shri Sheo Narain (Bansi): Sir, you are calling people who are not present in the House. We are trying to catch your eye and you are not calling us. We are members of the Consultative Committee.

Mr. Chairman: Order, order—Shri Sivamurthi Swamy—

Shri Sheo Narain: What is the order, Sir, you are following? You are calling Members who are not present in the House. Those Members who are present in the House and who try to catch your eye should be called.

Shri Sivamurthi Swamy: Sir, in this budget, for agriculture a very meagre amount has been provided. In this country we are receiving more than 50 per cent of our national income from the agricultural economy. When the national income coming from the agricultural sector is more than 50 per cent, justice demands that for agriculture we must set apart more than 50 per cent. At least 50 per cent should be set apart for this department.

In this budget, I think, the total for planning the social and development services comes to Rs. 195 crores. That means only $\frac{1}{2}$ per cent is allocated for the developmental and social services including agriculture, rural development, animal husbandry, co-operation, community development projects, national extension services, local development works, labour and employment and miscellaneous social development. This august House will be surprised to know that only $\frac{1}{2}$ per cent is allocated for all the departments of agriculture. I would, therefore, urge upon the Minister to influence the Cabinet and get more money. Unless you provide for some inputs in this agricultural economy, there is no hope of getting self-sufficiency in the country.

As the time at my disposal is limited, let me mention only the points which are agitating the people of my area very much. So many development projects have been taken up in the country by Government. One such development project in my area is the Tungabadra Project. There, under the crop pattern 1,25,000 acres have been fixed for sugarcane cultivation under the Tungabadra Project area. Another 2 lakhs acres have been fixed for paddy and other crops. Since 1,25,000 acres have been fixed for sugarcane cultivation under the Tungabadra Project area, it is but natural that every agriculturist wants to crush sugarcane by the side of his own field. Now there are only two sugar factories in this area, both run by my hon. friend Shri Morarka. From 1960 onwards the people of that area have applied for a licence for a co-operative society to start sugar factories but, for one reason or the other, the Government have not met their demand. In 1953, in fact Rs. 6 lakhs was collected for this purpose; but that society in Gangovathi has been dissolved because Kilachand was given a licence. He himself could not set up any factory. After that, another attempt was made to set up a factory in Kamalapur-Hospet and Anegundi area by the people of Raichur and they applied for a licence in 1960. Yet, nothing has been done.

The Food and Agriculture Minister, Shri Subramaniam, promised to visit that area. I do not know when he is going to do that. Here I want to bring to the notice of this august House that this Kamalapur is not just one village; there are 10 or 15 villages. 25,000 acres of sugarcane crop are standing and there is no arrangement to crush them. Every year it is getting dried up. The cultivators are helpless. The land is registered by our hon. friend, Shri Morarka. So, the sugarcane should be supplied to his factory. But they are not able to crush it. We do not want the working of this factory to suffer. We will supply them whatever they want. 5,000 acres are enough for one factory to crush at the rate of 2,000 capacity per day. Even if he wants 6,000, we are prepared to supply it. Let it be registered as an agreement between Shri Morarka and the ryots. Since we require a minimum of four factories, there should be at least two more factories. Otherwise, the economy of that area will be affected. So, I would urge upon the Minister to grant licence for the establishment of a sugar factory in this area. In that case, the people of that area will be benefited very much. I assure the Minister that there will not be any shortage of sugarcane.

I congratulate him for granting one licence for Kollegal. It goes to his old district of Coimbatore where he was practising. His clients have asked for a co-operative sugar factory and he has granted it. I congratulate him for that. But I would say that the same sympathetic consideration should be shown to the people of Raichur also. So, I would urge on him with all the force at my command that he should immediately sanction it.

This is not a request made by only a few members or some ryots. 4,000

[Shri Sivamurthi Swamy]

to 5,000 ryots of that area have sent a petition to this august House and a mention of it has been made in the Report of the Petitions Committee. People of that area have already collected Rs. 5 lakhs or 6 lakhs and it is lying idle in some bank without being put to any use. At a time when the Minister wants to increase the production of sugar I do not know why this licence is not granted. If that licence is not granted, it will be doing an injustice to the people of that area. So, I hope that the Minister in the course of his reply will give the assurance that something will be done in the Tungabadra Project area where 1,25,000 acres have been fixed for sugarcane cultivation.

Mr. Chairman: I would urge upon hon. Members to confine their speeches to ten minutes. I would request them to co-operate with me so that I could accommodate more members.

Shri Mahesh Dutta Misra (Khandwa): Mr. Chairman, I am very thankful to you for after a year or so I have been allowed to speak in this House. The problem of production and distribution is so inter-related that when we talk of the poblem of production we are necessarily confronted with the problems that face us in the field of distribution. Therefore, I find that conflicting opinions have been given in this House and people have tried to emphasise certain aspects only. The whole thing is, that when we look at it from an integrated angle, we find that our administrative machinery has failed to implement whatever we planned for, whatever laws we passed, whatever targets we fixed. So, essentially, it is a crisis of non-implementation. Unfortunately, there is a good deal of shifting of blames and shifting of responsibilities. The politicians blame or fix the responsibility on the administration, the administration blame the people and the people would ultimately blame both the politicians and the administration. Therefore, in such a context, even the lack of moral health of this country has been referred to by our hon. friend, Shri Surendra Pal Singh. That is also responsible for the non-implementation and for various other failures in the field of food and agriculture.

I do not wish to refer to it again but I would only like to say that it is one of the greatest problems in this country as to how to get the work done. We know a good deal about agriculture and we have enough food, both from internal production and from foreign countries. But when it comes to distribution, a lot of it gets into the blackmarket. Even today people do not complain about shortage; they complain about prices. Food is available in any quantity if you go and pay the blackmarket price. I have not been to Kerala but I think there also food is available in any quantity for the blackmarket price.

I do not want to make any negative criticism. So, first of all, I would like to suggest that the time has come when, in order to save democracy in this country and in order to save our schemes of planning in this country, we must further decentralise the apparatus of administration. Without decentralising the apparatus of administration, we would not be able to solve the problems of this country. In brief, I would only suggest that at all levels, from the metropolitan towns to the villages, there should be councils of the representatives of the people in order to supervise the work that is being done in this country, in order to supervise as to how our officials and others are doing their work. Unless and until the co-operation of the people is sought in this manner, in an organised manner, by giving authority and responsibility and by giving duty to the representatives, the elected representatives of the people, from all walks of life, nothing would be done in this country and we would go on talking

about these things and the country would remain static. Because, we have reached a situation in which the administration does not trust the politicians, the politicians do not trust the administration and people do not trust either. So, ultimately we have to decentralise power. If we decentralise power and apply it in various fields of food and agriculture—because, it is one of the crucial problems of our country,—we might be able to achieve some success, we might be able to check blackmarketing and we might be able to check hoarding, we may be able to achieve our goals for which we have fixed the targets. There should be targets and plans made by the people. Of course, a good deal of criticism has come that plans are made from above. If we decentralise authority in this country and if we decentralise initiative also, then the demand would come from the people that they want to make the plan and make it a success.

For myself I would only suggest that whatever money you decide to be spent on a particular scheme, give it to the people and let them decide the details of the plan, let them decide as to how they will grow more food. Do not give them the schemes; do not give the money to the officers but give the money directly to the people. I think, in these 18 or 19 years our administration has wasted so much money without any tangible results. If the people or their representatives waste it for a year or two, it would not lead us to anything worse, but ultimately the people would themselves correct their representatives because they are so near them, and they are so much in close contact with the people themselves. Therefore they will make them work, they will influence them and they will make them succeed in achieving the targets and their objectives. Therefore I only wanted to emphasise that the time has come when we should decentralise this machinery of administration.

Then I have only a few suggestions to make. A good deal has been spoken about fertilisers. The question of national self-respect has also been referred to in the matter of the fertiliser deal. I do not wish to go into the details but I only want to request the Food and Agriculture Minister that next time if he goes to the U.S.A. he should also pay a visit to a community, called the Amish Community, in Pennsylvania and see for himself that the average per acre yield of the fields that are cultivated by this Amish Community people in the long run give a better yield than the average American farm because they do not use fertilisers and many of the innovations introduced by the Americans and propagated throughout the world. There is a community in the heart of America which defies almost everything American. They do not have any contact with the Americans except for selling their grain. I would only request him that he would also make a probe as to how these people have become the best of farmers.

About irrigation I have only one suggestion to make. I have been telling this whenever I have an opportunity to say. We should concentrate on small and minor irrigation. The best way of doing this is this. There is a serious complaint which has been voiced by Members that poor farmers have not got any benefits from these plans, subsidies and all kinds of things. I suggest that every poor farmer in an unirrigated area below 15 or 20 acres should be given a well. There may be major schemes; there may be irrigation projects, but every farmer in an unirrigated area below 20 acres should be given a well immediately and, I tell you, within two years you would solve the problem of shortage of food. I do not wish to go into the details of it; I do not want to bring mathematics here, but it is just a question of thinking how. These poor farmers who have had no benefit, who have not received anything from the Government so far, if they get

[Shri Mahesh Dutta Misra]

a well, they would be able to produce more because the well would not be unutilised. A well taken by a big farmer might remain idle but a well given to a poor farmer would always give something because the first priority is water. Unfortunately, so much emphasis has been given on fertiliser. There have been examples cited by Members that these fertilisers have destroyed the land; in the long run fertilisers make the land poor. I do not wish to go into that kind of thing of inorganic and organic manure, but I want to tell you that the first necessity is that we give water to the poorest farmer in the country. If we can provide him with some water—of course, it would not irrigate more than 3 to 4 acres of land; in certain fortunate areas there might be wells which might be able to irrigate more than 4 acres—and even if four acres of land is irrigated by the poorest farmers in the country, whose percentage is more than 75 to 80, we will be able to bring up the food production in the shortest possible time.

I do not wish to take the time of the House and I have some work also, therefore with these few words, I thank you very much for giving me this opportunity.

खाद्य, कृषि, सामुदायिक विकास तथा सहकार मंत्रालय में उपमंत्री (श्री श्यामधर मिश्र) : सभापति महोदय, आज सबसे आशाजनक बात यह है कि न केवल इस सदन में अपितु पूरे देश में कृषि मन्त्रालय के सम्बन्ध और कृषि के सम्बन्ध में चारों तरफ़ से चर्चा हो रही है और कई वर्षों से हो रही है। इन दो, तीन वर्षों में विशेष इस प्रकार से यत्न हो रहे हैं कि हमें विशेष दिक्कतें मालूम होती हैं। हमारी विशेष परेशानियां हैं और यदि हम देखें कि इन 15–20 वर्षों में किस तरीक़े से कृषि में उत्पादन बढ़ा है तो कोई हमें शर्म की बात नहीं होनी चाहिये।

अभी एक माननीय सदस्य हैं आंकड़े दिये। श्री योगेन्द्र झा ने बतालाया कि किस तरीक़े से करीब 55 मिलियन टन से एक सीमा जो अधिकतम सीमा पहुंची वह 88 मिलियन टन तक पहुंची। दुर्भाग्य यह इस देश का है कि इस में हम करीब करीब 285 मिलियन टन एकड़ पर खेती करते हैं और जिसमें कि खाद्यान्न पैदा करते हैं...

श्री हुकम चन्द कछवाय (देवास) : सभापति महोदय, मैं आपकी व्यवस्था चाहता हूं सदन में गण-पूर्ति नहीं है।

Mr. Chairman: The bell is being rung. Now there is quorum. I will request hon. Members to keep the quorum.

श्री श्यामधर मिश्र : श्रीमन् मैं कह रहा था कि दुर्भाग्य की बात यह है कि हमारे यहां करीब 285 मिलियन एकड़ पर खेती होती है और साथ ही साथ एक नया जाल है अमरीका जिसमें करीब करीब 200 मिलियन एकड़ पर खाद्यान्न की खेती होती है। अमरीका जो कि एक नया जात कहा जाता है जो कि एक डेवलेप्ड नेशन है वहां करीब करीब 200 मिलियन एकड़ पर खाद्यान्न की खेती होती है लेकिन हमारी पैदावार की दुर्दशा यह है कि दुनिया में जो अधिकतम पैदावार हमने की वह 88 मिलियन टन है जबकि अमरीका उससे कम एक्रैज पर 225 मिलियन टन पैदा करता है। उसका कारण क्या है? कई कारण माननीय सदस्यों ने उसके बतलाये हैं लेकिन मुख्य कारण यह है कि खेती में अभी तक अधिक पूंजी नहीं लगाई गई है। जो पूंजी नहीं लगाई जा सकी है उस का मुख्य कारण यह है कि हमारे खेतिहर, हमारे किसान कमजोर हैं, गरीब हैं और वह पूंजी नहीं ला सकते हैं। यह पूंजी किस प्रकार की है? पूंजी कई शक्लों में है। उसको ऋण चाहिए, उसको खाद चाहिए, उसको बीज चाहिए, उसको पैस्टीसाइड्स चाहिए उसको पानी चाहिए। इनका उचित मात्रा में प्रयोग होना चाहिए। खेद की बात है कि अभी उतना हम नहीं कर सके हैं। साथ ही साथ

किसान को शिक्षा भी चाहिए । वह भी उतनी मात्रा तक हमारे द्वारा नहीं हो सकी है ।

श्रीमन्, मैं इन तीन, चार इनपुट्स के बारे में विशेष ध्यान आकर्षित करूंगा । गत 15 वर्षों में प्रयास हो रहा है सहकारी समितियों के जरिए, कोआपरेटिव सोसाइटीज के जरिए कि किसानों को अधिक से अधिक ऋण दिया जाय । मैं जानता हूं कि सहकारी समितियों का स्थान जो होना चाहिए देश में वह आज नहीं है । कुछ प्रदेशों में सहकारी समितियां बड़ी कमजोर हैं पांच प्रदेशों में खास तौर से बिहार, बंगाल, उड़ीसा, असम और राजस्थान जहां कि करीब करीब आबादी इस देश की 30 परसेंट है और रक़बा करीब करीब 28 परसेंट है । जो ऋण पूरे देश में पिछलेसाल दिया गया है करीब 360 करोड़ का उसमें से इन इलाकों में केवल 9 फ़ीसदी या 10 फ़ीसदी यानी तीस करोड़ रुपया दिया गया है । इन चार पांच इलाकों में सहकारी समितियां विशेष तौर से कमजोर हैं । इसलिए सरकार का ध्यान उस पर गया है । हम कोशिश कर रहे हैं कि एग्रीकल्चरल क्रेडिट कारपोरेशन वहां कायम किया जाय जो कि सहकारी समितियों के जरिये अधिक से अधिक उत्पादन का ऋण दे सके । वह तो उन इलाकों के लिए हुआ है और और इलाकों में भी बड़ी दिक्कतें हैं । एक बहुत रफ एस्टीमेंट लगाया गया है कि चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक किसानों के उत्पादन के लिए करीब करीब 12 सौ 13 सौ करोड़ रुपये सालाना चाहिए । और सहकारी समितियां आज करीब करीब 360 करोड़ सालाना दे रही हैं, इतना अन्तिम वर्ष में उन्होंने दिया है । और चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक जो लक्ष्य रखा गया है वह यह रखा गया है कि 700 करोड़ रुपया इन सहकारी समितियों के द्वारा किसानों को दिया जाय ।

अभी एक हाई ईल्डिंग वैराइटी इन्टेंसिव प्रोग्राम मन्त्रालय की ओर से बना है जिसकी प्रतिलिपि माननीय सदस्यों को दी गई है । उसके लिए भी अधिकतम करीब करीब 2 सौ करोड़ रुपये का कर्जा चाहिए । इसके माने साधारण तौर से देश के लिए 700 और 200 या 360 यह रफ एस्टीमेंट है, कुल 9 सौ या 1 हजार करोड़ रुपये किसानों को चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सालाना ऋण चाहिए । इसके लिए मन्त्रालय विशेष प्रयास कर रहा है । अभी कोआपरेटिव सोसाइटियों के अफसरों की मीटिंग हुई । अभी चीफ मिनिस्टर्स आये थे । उस पर भी विचार हुआ । कोशिश की जा रही है कि यह सात सौ करोड़ तो दिया ही जाय, सौ दो सौ करोड़ जो हाई ईल्डिंग वैराइटी के लिए है उसके लिए भी दिया जाय । माननीय दिगम्बर सिंह ने एक बात कही थी कि रिजर्व बैंक आफ इण्डिया के बड़े रेस्ट्रिक्टिव रूल्स हैं । उससे बड़ी परेशानी है । बैंकिंग इंस्टीट्यूशन को यह देखना पड़ता है कि किस तरह से उनके रुपये की हिफाजत रहे । लेकिन मैं यह उन्हें बतलाना चाहता हूं कि मन्त्रालय स्वयं इस बात को रिजर्व बैंक से ले रहा है और अभी मन्त्री जी ने रिजर्व बैंक के गवर्नर से भी बात की है । हमें आशा यह हुई है कि रिजर्व बैंक आफ इण्डिया स्वतः यह देखते हुए कि देश की आज आवश्यकता अधिक है सौ दो सौ करोड़ देने में न घबड़ायेगा और हो सकता है कि वह देगा । आखिर, इन सोसाइटियों की कमजोरी क्या है ? श्रीमन्, अगर कमजोरियों को बतलाऊं तो विशेषतः एक तो रुपये की कमी और उसका कारण क्या है ? इस रुपये की कमी का कारण यह है कि उनके पास डिपाजिट्स कम हैं सोसाइटीज के, यह कुछ लोगों का भ्रम है और इसका मैं निवारण करना चाहता हूं कि जितना कोआपरेटिव सोसाइटियों का रुपया है वह सब रिजर्व बैंक का रुपया है, सरकार का रुपया है । मैं यह साफ कहना चाहता हूं कि आज कोआपरेटिव सोसाइटीज के जरिये जो रुपया दिया जा रहा है और क्रेडिट सोसाइटीज को दिया जा रहा है, उसके

[श्री श्यामधर मिश्र]

जरिये दिया जा रहा है उसका केवल 45 प्रतिशत रिजर्व बैंक का है और बकाया 55 प्रतिशत जनता का रुपया है । यह तो केवल ऐग्रीकल्चरल क्रेडिट की बात है और अगर नान-एग्रीकल्चरल सैक्टर की कोआपरेटिव्ज को लीजिए तो आज करीब करीब 2 हजार करोड़ रुपया कोआपरेटिव सोसाइटीज का वर्किंग कैपीटल है, उसमें तो शायद रिजर्व बैंक का टोटल रुपया 15 प्रतिशत या 20 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होगा । इसलिए यह कहना कि कोआपरेटिव सोसाइटीज केवल गवर्नमेंट मनी से चल रही हैं यह बात नहीं है । इसमें कमियां हैं । जैसा मैं कह रहा था डिपाजिट्स कम हैं । लोअर लेविल पर जो समितियां है उनका तो डिपाजिट बहुत ही कम है । सिर्फ सेंट्रल बैंक और अपेक्स बैंक में थोड़ा ज्यादा है । उसका मुख्य कारण यह है कि नीचे की सोसाइटीज बहुत मजबूत नहीं हैं । कुछ तो बहुत छोटी छोटी हैं । अब यह निर्णय लिया गया है कि जितनी छोटी छोटी सोसाइटीज हैं उनको अमलगमेट किया जाय । जो क्रेडिट सोसाइटियां 2 लाख से ऊपर आज हैं, 5 लाख गांव हैं और 2 लाख सोसाइटियां हैं । पचास साठ या सौ मेम्बर की जो सोसाइटियां हैं वह बड़ी कमजोर होती हैं, उनमें मैनेजमेंट की क्षमता नहीं होती, एक सेक्रेटरी रखने की क्षमता नहीं होती । इसलिए हम चाह रहे हैं और एक प्रोग्राम बनाया है कि इन 2 लाख सोसाइटियों को अमलगमेट करके हो सके तो 1 लाख कर दिया जाय या 1 लाख 25 हजार तक ले आयें और इधर ऐसा प्रोग्राम साल व साल बना रहे हैं और कोशिश कर रहे हैं कि अगले तीन चार सालों में यह वायबिल यूनिट्स हो जायं और एडमिनिस्ट्रेटिव यूनिट्स हो जायं जिसके जरिये अधिक उत्पादन-ऋण किसानों को दिया जा सके ।

एक बार एक मेहता कमेटी रिपोर्ट हुई थी । चार वर्ष पहले की बात है । उन्होंने यह कहा था कि जो अपेक्स बैंक्स हैं, डिस्ट्रिक्ट बैंक्स हैं और जो समितियां हैं, सर्विस कोआपरेटिव्ज उनमें सरकार कम से कम 51 प्रतिशत अपना शेयर पार्टनरशिप करे । आज श्रीमन्, हम देखते हैं कि उसमें अभी कमी है । हम रिजर्व बैंक के जरिये कोशिश कर रहे हैं कि और भी शेयर इन सोसाइटियों के डिस्ट्रिक्ट बैंक में और अपेक्स बैंक में और अधिक डाल दें । अभी एक माननीय सदस्य ने कहा था कि सोसाइटियों के जरिये इंटरेस्ट रेट बहुत ज्यादा है । आज जो इन्टरेस्ट रेट है सोसाइटियों के जरिये किसानों को वह साढ़े छः प्रतिशत से लेकर ज्यादातर 9 प्रतिशत तक है । एक दो जगह थोड़ा सा...

श्री शिव नारायण : ज्यादा है ।

श्री श्यामधर मिश्र : मैं 9 फीसदी कह रहा हूं । मैं जानता हूं कि इससे ज्यादा नहीं है । साढ़े 6 फीसदी से लेकर 9 फीसदी तक है । इसमें सवाल यह देखना पड़ता है कि आखिर किया क्या जाय । हम जानते हैं कि रिजर्व बैंक से जो फाइनेंस मिलता है, कन्सेशनल फाइनेंस मार्केट रेट से 2 परसेंट नीचे मिलता है । लेकिन केवल 45 परसेंट रुपया रिजर्व बैंक से मिलता है और केवल वही मार्केट रेट से कम में मिलता है ? बाकी और 55 परसेंट डिपाजिट्स से आता है, लोन से आता है जिसका कि आज मार्केट रेट करीब 6 प्रतिशत और 7 प्रतिशत है । 6–7 प्रतिशत वह है और अगर चार प्रतिशत में यह मिला तो तीन स्ट्रक्चर कोआपरेटिव का है—अपेक्स बैंक, डिस्ट्रिक्ट बैंक और सोसाइटी लेवल । माननीय सदस्य कह सकते हैं कि तीन स्ट्रक्चर में से एक या दो स्ट्रक्चर हटा दिये जायं । लेकिन इस पर भी विचार हुआ और इस पर काफी विचार हुआ । विचार होने पर इस नतीजे पर सरकार आयी...

श्री शिव नारायण : मिश्रा जी, एक बात क्लीअर कर दें, यह जो इन्टरैस्ट 9 परसेंट या साढ़े छः परसेंट लेते हैं यह छः महीने पर लेते हैं, साल भर पर नहीं लेते हैं ।

श्री श्यामनंदन मिश्र : मैं अभी इस बात पर आने का प्रयास करूंगा ।

तो इन कोआपरेटिव सोसाइटियों में यह हो सकता है कि एक टायर खत्म कर दिया जाय लेकिन उसका आलटरनेटिव क्या है यह सोच लिया जाय । आज अगर डिस्ट्रिक्ट बैंक के टायर को तोड़ दिया जाय तो क्या आप समझते हैं कि स्टेट लेवल से गांव की सोसाइटीज में डाइरेक्ट ट्रांजैक्शन हो सकता है ? और अगर अपेक्स बैंक को तोड़ दिया जाय तो क्या आप समझते हैं कि रिजर्व बैंक इतना कमांड कर सकेगा कि हर डिस्ट्रिक्ट यूनिट से डाइरेक्ट ट्रांजैक्शन कर सके ? और कुल तीनों यूनिटों का जो रेट आफ इन्टरेस्ट कान्ट्रीब्यूशन होता है किसानों पर वह ढाई से साढ़े तीन परसेंट तक होता है । इसलिए समस्या जो माननीय सदस्यों के सामने रखना चाहता हूं, आज समस्या यह नहीं है कि क्रेडिट का दर अधिक है । बल्कि समस्या यह है कि क्रडिट कम मिलती है और क्रेडिट अधिक मिलनी चाहिए किसानों को और समय से मिलनी चाहिए । . . . (व्यवधान) . . . वही मैंने कहा कि तीन परसेंट केवल कोआपरेटिव को दिया जाता है । अभी तक यही प्वाइंट मैं कह रहा था । तो सरकार यह कोशिश कर रही है कि समय से क्रेडिट दी जाय और यथामात्रा में क्रेडिट दी जाय । समय से देने के लिए बराबर हम लोग डिस्ट्रिक्ट बैंक्स और सोसाइटी लेवल से बातें कर रहे हैं और यहां से आदेश गया है, सुझाव गये हैं कि डिस्ट्रक्ट बैंक बराबर अपनी सोसाइटी लेवल पर साल में दो बार, तीन बार मीटिंगें करें और उनकी दिक्कतें जहां तक हो सकें दूर की जायें । मुझे खुशी है इस बात को कहते हुए कि अधिकतर स्टेटों ने पांच छः का तो मैंने चर्चा किया, उनकी तो अलग बात कही मैंने, लेकिन अधिकतर राज्यों ने इस बात को स्वीकार किया है और इस बात को भी स्वीकार किया है कि क्राप लोन दिया जाय । अभी महाराष्ट्र, मद्रास और गुजरात में खास तौर पर इस खरीफ में और रबी में भी क्राप लोन दिया गया और क्राप लोन माने क्या ? यानी सिक्योरिटी पर नहीं, जमीन की सिक्योरिटी पर नही, पैदावार की सिक्योरिटी पर लोन दिया गया और और राज्यों ने भी यह स्वीकार किया है कि अगला जो आने वाला खरीफ है, करीब करीब सभी राज्यों ने स्वीकार किया है कि उसमें हम क्राप लोन किसानों को उनकी क्राप पर चाहे वह टेनेन्ट हों चाहे ओनर्स हों, देंगे । तो एक ओर हम बढ़ रहे हैं, एडीकेसी आफ क्रेडिट की ओर हमारा ध्यान है । हम उसको बढ़ाना चाहते हैं । पिछले साल 360 करोड़ दिया गया है और हिसाब लगाया गया है कि करीब करीब 12 सौ करोड़ चाहिए 1970-71 में । तो आज करीब 25-30 प्रतिशत कोआपरेटिव सोसाइटियां किसानों को कर्ज देती हैं जितनी कि उनकी आवश्यकता है उसका 25-30 प्रतिशत । और 1951 में रूरल क्रेडिट सर्वे ने हिसाब लगाया था, यह तीन फ़ीसदी था । एक बात मैं यहां पर कहना चाहता हूं और वह यह है कि ये सहकारी समितियां न केवल ऋण की ओर ध्यान दे रही हैं बल्कि और चीजों की ओर भी ध्यान दे रही हैं । जैसा अभी डेरी-कोआपरेशन के सम्बन्ध में चर्चा हुई, अभी पाटिल साहब ने कहा और भी भाइयों ने इस का जिक्र किया कि एक एक आनन्द, एक एक मेहसाना एक एक जिले में कायम कर दिया जाय, तो हम भी यही चाहते हैं कि चौथी पंच वर्षीय योजना के अन्दर एक एक स्टेट में एक एक आनन्द कायम किया जाय, क्योंकि हम भी उस से बहुत प्रभावित हैं और हम जानते हैं कि डेरी-कोआपरेशन सबसीडियरी फूड के लिये बहुत आवश्यक है ।

Mr. Chairman: It has changed from district to State?

श्री श्यामधर मिश्र : हमारा लक्ष्य यही है कि एक एक डिस्ट्रिक्ट में हो, लेकिन चौथी पंचवर्षीय योजना में हम चाहते हैं कि एक-एक स्टेट में एक-एक आनन्द, मेहसाना कायम किया जाय, यही हमारा मोडस्ट लक्ष्य है और इस के लिये हमारा मंत्रालय कार्य कर रहा है।

अभी मेहरोत्रा जी ने कल कहा था—कोआपरेटिव फार्मिंग के बारे में। उन्हें इसकी प्रगति के बारे में शिकायत है। मैं भी चाहता हूं कि कोआपरेटिव फार्मिंग की प्रगति हो, मुझे अफसोस है कि इस में उतनी प्रगति नहीं हुई जितनी होनी चाहिये थी। मंत्रालय इस ओर कोशिश कर रहा है लेकिन यह सोशल प्राबलम है। चारों ओर से कुछ न कुछ विरोध होता है, सदन में भी दो रायें आ जाती हैं मैं इस सम्बन्ध में केवल इतना ही कहूंगा कि डा० गाडगिल के नेतृत्व में एक कमेटी स्थापित हुई थी; उस ने जो कहा है, वह मैं यहां पर कोट कर देना चाहता हूं। उस में उन्होंने समस्या की ओर ध्यान आकर्षित किया है तथा उसका समाधान भी दिया है, उसके आगे मैं कोआपरेटिव फार्मिंग के बारे में कुछ नहीं कहना चाहूंगा—

"The data thrown up by the survey and the experience of four years in the Third Plan suggest that, as a result of the pilot projects (in co-operative farming) certain areas or clusters of potential growth have developed. These include the districts of Dhulia in Maharashtra, Sambalpur in Orissa, Bhavnagar in Gujarat and Jullundur in Punjab. In these areas, favourable conditions have been created and a leadership exists which is interested in the programme and has a fair understanding of its essential features and problems. Besides these areas, there are certain pilot projects like Meerut, Meerut District, Uttar Pradesh, where, with careful nursing, the programme of co-operative farming is likely to develop encouragingly. In addition, there are isolated societies which have also progressed well. Taking the country as a whole, however, cooperative farming has not yet taken firm roots. Here it is necessary to emphasize that the programme is still in its infancy. By its very nature, cooperative farming will require time before it can make a significant impact on the entire country. Even so ,in the areas mentioned above, study leads to the conclusion that the programme has demonstrated its capacity to step up production and create the potential for future development. In other areas, the programme is yet to develop."

श्रीमन्, इतना कह कर मैं केवल इतना ही विश्वास दिलाना चाहता हूं—माननीय सदस्यों को, हम चाहते हैं कि हर जगह कोआपरेटिव फार्मिंग विस्तृत रूप से हो और जहां पर इसकी डिमाण्ड है, जहां क्लस्टर है वहां देने की सोच रहे है। चौथी पंचवर्षीय योजना में, यद्यपि यह अभी निश्चित नहीं हुई है, लेकिन विचार है कि करीब-करीब 10 हजार सोसाइटीज को कायम किया जाय, सरकार उनको सहायता दे और उनका इन्टीग्रेटड एप्रोच हो।

नान-एग्रीकल्चरल सैक्टर में क्रेडिट तथा नान-क्रेडिट में भी कोआपरेटिव्ज ने जो काम पिछले 15 वर्षों में किया है, उस के लिये हमें गर्व होना चाहिये। आप देखें कि कोआपरेटिव स्टोर्स की सेन्ट्रली स्पौन्सर्ड स्कीम अभी तीन साल पहले हम ने बनाई। इस समय 233 सैन्ट्रली स्पौन्सर्ड स्टोर्स जहां पचास हजार की आबादी के शहर हैं और करीब करीब सात हजार स्टोर्स छोटे छोटे हैं। इनकी सालाना बिक्री जो इस साल हुई है, मार्च के अन्त तक, वह करीब 125 करोड़ रुपये हुई है और हम चौथी पंच वर्षीय योजना में लक्ष्य रख रहे हैं—20 फी सदी का। जितनी शहर की आबादी है, 10 हजार के टाउन तक जाने का हमारा इरादा है, वहां सोसायटीज कायम करेंगे और

चाहते हैं कि 20 फ़ी सदी व्यक्ति उन में शामिल हो जांय और जितनी बिक्री होती है, कम से कम 20 फ़ी सदी तक इन सहकारी समितियों के जरिये हो। सरकार इस दिशा में कोशिश कर रही है और हो सकता है कि पूरा टारगेट एचीव न हो, लेकिन जो थर्ड फ़ाइव ईयर प्लान का टारगेट कन्ज्यूमर्स स्टोर्स का था, वह न केवल हम ने रीच किया है, बल्कि ओवर-रीच किया है ।

लेबर कोआपरेशन के बारे में मुझे दुख है कि वह प्रोग्राम इतना सफल नहीं हुआ है, जितना होना चाहिये । मुझे यह कहते हुए खेद होता है । लेकिन थोड़ी सी प्रगति उस में हुई है । मैं एक चीज क्रेडिट के सम्बन्ध में कहना भूल गया, श्रीमन्, क्षमा चाहता हूं । अभी इस साल सूखा अधिक पड़ा था, सूखा पड़ने से किसान अपना कर्ज अदा नहीं कर सकता था, ओवर-ड्यूज बढ़ने की सम्भावना हो गई । इसके लिये रिजर्व बैंक के पास क्रेडिट स्टेबिलाइजेशन फण्ड है और स्टेट लेवल पर भी कुछ प्राविजन है । रिजर्व बैंक के पास 10 करोड़ के लगभग है, जब कि इस में इस साल 20–22 करोड़ की जरूरत पड़ेगी । मुझे खुशी होती है आप को बतलाते हुए कि करीब करीब 7–8 करोड़ तो इस में रिजर्व बैंक देने को तैयार हो रहा है और 4–5 करोड़ रुपया स्टेट से सैन्ट्रल गवर्नमेन्ट के जरिये डाला जा रहा है । इस तरह से 12-13 करोड़ रुपये का इन्तजाम हो गया है, बाकी सात करोड़ रुपये की बात है, हम फाइनेन्स मिनिस्ट्री के पास जा रहे हैं, मंत्रालय इस विषय को उन से टेक-अप कर रहा है और आशा की जाती है कि उन से इस समस्या का समाधान हो सकेगा । श्रीमन्, सहकारिता के सम्बन्ध में अब इस से अधिक नहीं कहूंगा क्योंकि मेरे पास इतना समय नहीं है ।

अब मैं थोड़ा सा आप के सामने कृषि के सम्बन्ध में कहना चाहता हूं । कुछ माननीय सदस्यों ने यह कहा है कि जोर इस बात पर दिया जा रहा है कि इनआर्गेनिक मैन्योर्स, कैमिकल फर्टीलाइजर्स ज्यादा लाये जा रहे हैं, लेकिन केवल उससे ही पैदावार बढ़ने वाली नहीं है । पता नहीं कैसे, माननीय सदस्यों ने यह नतीजा निकाल लिया है कि मंत्रालय केवल इनआर्गेनिक मैन्योर्स पर ही आधारित है ? किसी ने कहा कि सिंचाई की व्यवस्था अधिक होनी चाहिये, मैं इस सम्बन्ध में यही कहना चाहता हूं . . .

श्री सुरेन्द्रपाल सिंह : उनका इस्तेमाल हो रहा है, लेकिन सिंचाई नहीं करते हैं, इस वजह से खाद बेकार जा रही है । (**व्यवधान**)

एक माननीय सदस्य : हमारा मतलब यह नहीं है कि वह खराब चीज है, लेकिन उसका जो प्रचार किया जा रहा है, वह गलत है ।

Mr. Chairman: If there is a chorus, he will not be able to meet any point.

श्री श्यामधर मिश्र : मैं कह रहा था कि सिंचाई पर मंत्रालय का उतना ही जोर है, जितना कि और इनपुट्स पर है । यदि मैं माइनर इरिगेशन और मेजर इरिगेशन की संख्या आप के सामने दूं तो मुझे पूरा विश्वास है कि आप इस नतीजे पर आयगे कि मंत्रालय प्रयास कर रहा है । हां, उतना नहीं जितना कि वह कर सकता था, क्योंकि पैसे की कमी है । आज देश भर में करीब-करीब वैज्ञानिकों ने हिसाब लगाया है कि 190 मिलियन एकड़ में पानी देने की क्षमता हमारे देश के खेतों में है ।

एक माननीय सदस्य : गलत ।

श्री श्यामधर मिश्र : बिलकुल सही है ।

एक माननीय सदस्य : सिर्फ़ कागज में है ।

श्री श्यामधर मिश्र : 190 कम नहीं होता है । उस 190 मिलियन एकड़ में से

[श्री श्यामधर मिश्र]

केवल 50-55 मिलियन एकड़ में पानी सिंचाई के लिये 1950-51 के पहले दिया गया लेकिन आज 1965-66 के जो आंकड़े हैं, वे यह हैं कि करीब 90 मिलियन एकड़ में आज सिंचाई हो रही है। हर एक मिलियन एकड़ को बढ़ाने के लिए करीब साठ करोड़ रुपया चाहिये। इरिगेशन और पावर का मंत्रालय कोशिश कर रहा है ब बड़े डेम बनाने का और उसने 44 मिलियन एकड़ का काम अपने हाथ में ले रखा है। उस में से करीब 17-18 मिलियन एकड़ का अभी तक हुआ है और बाकी के लिए आशा की जाती है कि चौथी योजना और पांचवीं योजना में पूरा होगा। मेरे पास आंकड़े हैं और उनको मैं आपके सामने रखना चाहता हूं। इस मंत्रालय ने जो योजना हाथ में ली है उससे आशा की जाती है कि करीब 60 मिलियन एकड़ में इरिगेशन हो जायेगा केवल माइनर इरिगेशन से 1970-71 में। आज वह 50 है। इसका मतलब यह है कि दस की नेट एडीशन हो जायेगी, ग्रास नहीं। मैं आप को यह भी बतलाना चाहता हूं कि इन पिछले पंद्रह सालों में, तीन योजनाओं में हम ने बड़ी, छोटी और मध्यम दर्जे की सिंचाई योजनाओं पर करीब 2000 करोड़ खर्च किया है। अब केवल चौथी योजना में तीनों को मिला कर पंद्रह सौ करोड़ रुपया खर्च करने वाले हैं।

Shri Nath Pai (Rajapur): Who disputes that? You have reached your monetary targets. I accept that. The confusion is about the physical targets and their achievement.

Shri Shyam Dhar Misra: I am giving only the physical targets; I am not giving the monetary targets. If the hon. Member has not listened, it is not my fault.

Shri Nath Pai: I am listening.

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा (बाढ़) : जितना रुपया लगाया है उसके अनुपात में पानी कितना पहुंचा है, कितने पानी का उपयोग हुआ है ? पचास मिलियन में आप कह रहे हैं। वह नहीं हुआ है। उत्तर प्रदेश का ही आप बता दीजिये।

श्री श्यामधर मिश्र : उत्तर प्रदेश का भी मैं बता सकता हूं।

श्री विश्राम प्रसाद (लालगंज) : आप इतने आंकड़े दे रहे हैं इन से क्या फायदा है। कब तक आप इस खाद्य समस्या को हल कर लेंगे, इसको आप बतायें। कब जा कर आप को दूसरे देशों से खाद्यान्नों के लिए भीख नहीं मांगनी पड़ेगी ?

श्री न० प्र० यादव : (सीतामढ़ी) : जो कुछ आप बोल रहे हैं उस में से काफी कुछ इन चार बुकलैट्स में दिया गया है जोकि आप की तरफ से माननीय सदस्यों में वितरित की गई हैं। हमें भी थोड़ा सा समय मिलना चाहिये ताकि हम भी अपने विचार आप के सामने रख सकें।

श्री श्यामधर मिश्र : आप को भी समय मिलेगा।

मैं यह कह रहा था कि जहां तक यूटिलाइजेशन का सम्बन्ध है, पानी का जितना पोटेंशल क्रियेट हुआ है, उस में से यूटिलाइजेशन की संख्या 75 परसेंट के करीब आई है इस साल।

श्री नाथ पाई : नहीं।

श्री श्यामधर मिश्र : अगर आपको सन्देह है तो इरिगेशन और पावर मंत्रालय से सवाल करके यह जानकारी हासिल कर सकते हैं। हमारी इत्तिला यह है कि अस्सी परसेंट के करीब वाटर का यूटिलाइजेशन हुआ है। इरिगेशन के मामले में हम कोशिश यह कर रहे

हैं कि अगले चार पांच बरसों में अंडरग्राउंड वाटर के यूटिलाइजेशन के लिए करीब सात लाख पम्पिंग सैट लगाये जायें और इस साल यानी 1966–67 में एक लाख के ऊपर पम्पिंग सैट ग्राउंड वाटर से हम उठाने की कोशिश कर रहे हैं । टैक्स के लिए भी रुपया रखा गया है और वैल्ज के लिए भी रखा गया है । लेकिन मैं फिगर्ज देना नहीं चाहता हूं ।

मैन्योर्ज के बारे में अब मैं कुछ कहना चाहता हूं । यह जो कहा जाता है कि इन-आर्गेनिक मैन्योर्ज मंगा रहे हैं या इस्तेमाल कर रहे हैं, यह बात ठीक नहीं है । आर्गेनिक मैन्योर्ज के बारे में मैं यह कहना चाहता हूं कि ग्रीन मैन्योर और रूरल कम्पोस्ट इन दोनों को मिला कर सन् 1966–67 में करीब डेढ़ सौ मिलियन टन हमारे पास खाद होगी । लेकिन खेद की बात यह है कि जब आर्गेनिक मैन्योर्ज की बात होती है तो जब सौ टन आर्गेनिक मैन्योर होती है तो शायद आधा और एक परसेंट उस में नाइट्रोजन होती है, एक परसेंट उस में न्यूट्रिशन वैल्यू होती है फील्ड्ज के लिए और जो हमारी इनआर्गेनिक फर्टि-लाइजर है उस में करीब 20 या 22 परसेंट होती है । इस वास्ते कोशिश यह हम कर रहे हैं कि दोनों को बैलेंस करें और दोनों को बैलेंस करके हम उत्पादन करें ।

कृषि के सम्बन्ध में मैं एक बात कहना चाहता हूं । माननीय सदस्यों ने कहा है कि अफसोस की बात है कि गल्ला मंगाया जाता है । यह सही बात है . . . .

Mr. Chairman: I think the hon. Deputy Minister will conclude at 4 p.m. He may leave the major things to his senior colleague.

Shri Shyam Dhar Misra: I am leaving all major things to the senior Minister.

मैं यह कह रहा था कि गल्ला बाहर से मंगाने की बात कही जाती है । यह सही बात है । करीब 1600 या 1700 करोड़ का गल्ला विदेशों से 10–15 वर्ष में मंगाया गया है । लेकिन आप एक बात को एप्रिशिएट करें । हर साल हमें करीब पांच सौ करोड़ रुपये का फारेन एक्सचेंज एग्रिकलचरल सैक्टर से मिलता है, इतना हम अर्न करते हैं । दस-पंद्रह बरस में करीब हम ने पांच हजार करोड़ रुपये का फारेन एक्सचेंज एग्रिकलचरल सैक्टर से अर्न किया है । साथ ही साथ हमारे इंडस्ट्रियल सैक्टर ने सालाना करीब बारह सौ से लेकर चौदह सौ करोड़ रुपये का एग्रिकलचरल प्रोडक्ट लगाया । इस तरह से यह साफ हो जाता है कि आज इंडस्ट्रियल सैक्टर बहुत कुछ हमारे एग्रिकलचरल सैक्टर पर मुनहसर है । इस में कोई शक नहीं है कि हमें पैदावार बढ़ानी चाहिये । कैश क्राप्स का भी उत्पादन बढ़ाना है । उस सम्बन्ध में हाई यील्डिंग वैराइटीज का प्रोग्राम है । मंत्री महोदय उसकी चर्चा करेंगे, मैं कुछ कहना नहीं चाहता हूं ।

माननीय सदस्यों ने इम्प्लेमेंट्स की बात भी कही है । यह कहा गया है कि ट्रेक्टर नहीं मंगाये जाते हैं । यह सही है कि ट्रेक्टर्ज की हमारे यहां दिक्कत है । कुछ फैक्ट्रीज कायम हुई हैं, कुछ उत्पादन हुआ है लेकिन उतना नहीं हुआ है जितना होना चाहिये । हिसाब लगाया गया है कि दस-ग्यारह हजार ट्रेक्टर्ज होंगे लेकिन आवश्यकता बीस हजार की होगी . . . .

श्रीमती जयाबेन शाह (अमरेली) : जो बेकार पड़े हुए हैं ?

एक माननीय सदस्य : तीस हजार ।

श्री श्यामधर मिश्र : यह सही है कि बहुत से बेकार पड़े हुए हैं । पिछले साल 18 लाख के स्पेयर पार्ट्स हम ने मंगाने की आज्ञा दी थी । स्पेयर पार्ट्स मंगा कर ट्रेक्टर्ज को ठीक कराये

[श्री श्यामधर मिश्र]

की हम ने व्यवस्था की थी । हम विचार कर रहे हैं कि इन ट्रेक्टर्ज को ठीक करने के लिए जितना रुपया स्पेयर पार्ट्स के लिए हो सके, दिया जाये ।

15.57 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER *in the Chair*]

इन शब्दों के साथ मैं कहना चाहता हू कि कोम्प्रोमेटिज्ड के जरिये, एरिया प्रोग्राम के जरिये और इस एक्सपोर्ट के जरिये जो कुछ हो रहा है, यह सही है कि आवश्यकताओं से कम हो रहा है । लेकिन इसकी वजह यह है कि साधनों की कमी है । हम चाहते हैं कि पांच बरस में जितना पानी हो सके इस्तेमाल करें और पैदावार बढ़ायें । लेकिन उसकी एक सीमा है । हमारे पास उतना धन नहीं है । हिसाब लगाया गया है कि जितना पानी हमारे देश में नदियों में है और अंडर ग्राउंड है उसको अगर यूटिलाइज करना है तो उसका प्रोग्राम बना था और मैं आप को बतलाना चाहता हूं कि अभी भी जो काम बचा हुआ है उसको पूरा करने के लिए पांच हजार करोड़ रुपया चाहिये । उतना पैसा नहीं है । दस-पंद्रह बरस लगेंगे । लेकिन एमफेसिस इस पर दिया जा रहा है । जोर इस पर हम दे रहे हैं । कैश क्राप्स भी पैदा करें और खाद्यान्न भी हम पैदा करें । हमारी इकोनोमी के लिए ये दोनों जरूरी हैं । प्रति एकड़ यील्ड हमारी बढ़े, इसके लिए हम लोग प्रयास कर रहे हैं ।

श्री तुं० राम (सोनवरसा) : जो आगे बैठते हैं उनको आप बुलाते जा रहे हैं, हमारी तरफ आप देखते भी नहीं हैं । हम भी बोलने के लिए आये हैं, सिर्फ बैठने के लिए नहीं आये हैं । जरूर बोलूंगा ।

श्री हुकम चन्द कछवाय : आप क्यों चिल्लाते हैं । कांग्रेस छोड़ दो, हम आप को समय देते हैं बोलने के लिए । कांग्रेस वाले आप को बोलने नहीं देंगे ।

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : ये अपनी पार्टी का समय ले रहे हैं । आप को क्या एतराज है ?

Shri Nath Pai: May I begin now? Has my hon. friend concluded his challenge?

The way the crisis has burst on this country this year in all its tragic dimensions shows the colossal failure of the food and agricultural policies of the Government for the past 18 years. This is a problem which has not come all of a sudden. This problem has been with us since 1943. I am quite sure that Shri C. Subramaniam knows that the first inquiry committee to examine this problem and to find out if any remedies exist and if so, how to apply them, was appointed by the then Viceroy of India in 1943.

16 hrs.

What the problem is is known. What its nature is is known. What its dimensions are are known. The remedy is known. Why do we fail then? How is it that every third or second year the problem visits us with all its tragic connotations and the tragic intonations which it brings along with it.

In the first place, can we put this problem in a better way than a recent summary which has been given in just less than five lines by Prof. Lindblom? The article from which I am quoting is in the latest issue of *Foreign Affairs*. I hope there are many in their party who will care to read something apart from their own speeches. Prof. Lindblom gives a summary of what is wrong with our agriculture.

> "We know why the grain was not more. Poor seeds. Exhausted soil. Little mechanisation. Crude tools. Primitive ploughs and bullocks too weak to pull heavier ones. Untrained farmers. Little capital investment in the land. Low repute of

manual labour. Caste rules that block imovation. Traditionalism. Ignorance. Inefficiency. Insecurity. Corruption. Apathy".

This is the list of what is wrong with agriculture in India. We know it all these years. We did not need a foreign expert, a professor, to come and tell us about this.

None-the-less the problem comes. Why does it come? One reason is this—I would like Shri Subramaniam to contemplate about it very seriously. He brought, we thought, a new dynamism, a new understanding, when he took over the portfolio. We have not still given up completely that he may succeed where many of his colleagues and predecessors have failed. I would ask him, is not the main cause this that in spite of 18 years—this reference to 18 years appears often; I know it is a hackneyed phrase, and I am not in love with any cliche, revolutionary or bourgeois, but we have to use this phrase because the problem has been with us all these years.....

Shri C. Subramaniam: Every year the number increases.

Shri Nath Pai: Every year the dimensions of it, instead of diminishing, get expanded. In spite of these 18 years, why does it happen? One reason is that in spite of their long cohabitation with this problem, they have not mastered it, they have not understood it. There is a drift about the policy of Government. The Government remain vacillating from policy to policy.

One single example. In 1947 what did we find? We were having controls. But suddenly controls were withdrawn in spite of the warning of two eminent economists who were then managing the Commodities. Prices Board—I mean Shri Gorwala and Prof. Gadgil. Prices shot up. We introduced controls. As soon as controls are introduced and things become all right we forget that it is a major problem of the country and there are no easy solutions to it. It is a hand-to-mouth policy that the Government try to evolve. It is something like this: once the house is on fire they begin to look for the implements to put it out. But once the fire is put out, they do not bother if it was really put out or it was only a semblance of the fire being put out. This is what keeps happening again and again.

The second deception is this. They set up targets estimating the demand in the country taking into the consideration the growth of population, and having done so, Government and their advisers, in a facile manner, persuade themselves that everything that could be done has been done, because they have set up the targets. Now, setting up a target is not achieving it. They set targets for every five year plan. But the targets are not hit. So at the end of the five year plan, he or his predecessor has been faced with a deficit.

It is no use saying that the problem is solved because in terms of targets, in terms of goals, in terms of objectives and aims the problem has been assessed and estimated. They have developed a capacity for deceiving themselves and misleading the country by saying that since the targets have been set—whatever may be happening with regard to implementation—the problem is solved, once the targets are formulated. This is in spite of the fact that in every Plan, there is a failure of 8—26 per cent in achievement

How one feels a little embarrassed, if not a little hurt, when in 1959 a Ford Foundation Expert Committee put it in these words. I do not like quoting foreign authorities, but here it is; there is a special embarrassment in this finding.

"If foodgrains production increases no faster"— it is always inadequate—

"then the present trend indicates that the gap between supply and demand in 1965 and 1966 will be about 28 million tons. A third plan target of 110 million tons must

[Shri Nath Pai]

be reached if the country is to go forward. In fact, greatly accelerated food production is necessary to prevent hunger and possibly, civil disturbance".

A clear warning was given by a team of foreign experts about what will be precisely happening in 1965 and 1966. We see every word proving true. The exact amount of the deficit that was then apprehended has come to be true. It is exactly what they anticipated. After all, they were not Indians. With this kind of failure, the tragic events which country witnessed in Kerala and in Bengal would be ineitable. There may be mischief; there may be a tendency to exploit the situation somewhere, but the basic fact, the basic failure, cannot be wished away with or explained away easily.

The other reason is this. This is something very disturbing. In spite of the talk we hear, there is a dangerous weakening of the authority of the Centre. The Centre today is not in a position to discipline the provincial satraps, the so-called Chief Ministers who have come to be the pillars and props of the Government. You believe in a single authority, but you are not able to enforce your mandate. You have to take into consideration the prejudices and parochial interests of those who are the props of the Government. This is a danger not only on the food front but to the very concept of national unity. Shri Subramaniam can go to the US and persuade President Johnson to give surplus wheat to us, but he cannot persuade Shri Ram Kishen to part with his wheat. He can go and ask Burma's Gen. Ne Win to part with scarce rice, but he cannot ask Shri Brahmananda Reddy to give rice to Maharashtra, Gujarat or Kerala. Here is a failure writ large in the gradual weakening of the authority of the Centre.

This is a political matter which is overflowing into the economic field. I know that Shri Subramaniam had evolved correct policies. I know that he could see the dangers and he was trying to face the situation and meet it. But then came the politician in him. As an experienced administrator, he knew the remedy, but the tactful politician in him—what could he do. He, of course, had to carry his provincial colleagues, who are the real prop of this Government, with him. But I warn him: so long as we do not do this, the food problem will not be solved.

Why do we ask for scutting of the zones? We know the dangers. Is this not one single Union to be treated as such? What happens today? It is sabotaging, it is undermining, it is dynamiting, the concept of national unity. Yesterday he replied to my simple question that it was in the wake of the holocaust in Calcutta that he had increased the ration in Calcutta, making it higher than anywhere else in the country. What is the implication of it? That is only under coercion that they will act and come on the right path, that there is a premium placed on violence in this country.

Shri C. Subramaniam: I did not say that the increased quantum of ration in Calcutta is higher than anywhere else. I said the availability in Bengal, taking into account the internal production and what has been supplied from outside, is more. That does not mean that the distribution of ration in Calcutta is more. As a matter of fact, it is the same ration as anywhtre else.

Shri Nath Pai: I would like to say that the per head availability of rice in Calcutta, as claimed by the West Bengal Government is higher today than anywhere else. If it is a minor point, the basic point remains, that you rush and do things in the wake of this holocaust.

I would like them to see how acute is the problem today. I know there is a growing self-complacency which alarms me. Once the problem tends to become a little easier, we are likely

to slither back into the old habit of self-complacency. Shri Subramaniam, a shrewed and clever man, has been having a little quibbling and hair-splitting. Of course, he will accuse me of that.

I do not take any delight or joy in bringing figures and facts and pictures of Indians starving of death. I avoid it because that is not your failure; as a fellow-Indian it is my failure and I feel hurt by it. But can I turn my back on his juggling of the words starvation and malnutrition? What is the crude fact?

Here is a UNICEF report about it. I am quoting from Mr. Donald K. Farrs, the expert from UNICEF, a Canadian national who has retired after working for UNICEF programmes of applied nutrition in India since 1960. He says that the death rate in India this year would be higher than normal on account of famine conditions and resultant malnutrition, particularly in badly affected areas. He has talked of political reasons. He is an expert, he is not a political agitator, he is not left, right or even of the centre. He was here, this is what he has said.

I should not refer to consitituency matters in Parliament, I usually avoid it, I think the proper course is to tour, but I come from an area which lives on rice, and I saw the pathetic conditions only a fortnight back, and I had no reply to a widow coming and asking me with tears in her eyes this question. I do not want that a impression should get round that you will never get enough rice even though you are habituated to rice unless you are going into the holocaust of burning stations and all that. Is that what you want? You give in another tate 4½ kilos, but here people as much habituated to rice as the Kerala people or West Bengal people are condemned to a ration of 13/4 kilos per month. I am talking of Ratnagiri.

The woman said to me: "I have five mouths to feed. I am a widow, I have three children and an old mother. I get from Bombay from my son who works in a factory Rs. 8 per month." This is the problem which needs to be answered today, tomorrow, by me, by you, by all of us. And there are tens of thousands of them.

What are we going to do for them? The problem, therefore is not as simple as the Government is pretending.

Here is the simple thing that has been happening. You were giving your figures. I will be telling something to you what the experts say about our targets in irrigation, and what the truth is about irrigation. These are Government figures. The revised conception for the third plan was 100 million tons. Actual achievement, last year's best, was 88 million tons. This year it is 75 million tons or thereabout. The same thing about cotton, the same thing about oil seeds.

Some failures I understand are not within our control, but some things can be done and are not done. I will take a very simple example. Five different committees or six have gone into the issue of sufficient storage capacity. The Institute at Mysore told the country the shocking statistics that as much as 11 per cent. some say as much as 25 per cent, of the foodgrains are destroyed by rodents in this country. I do not know the exact figure.

Dr. L. M. Singhvi (Jodhpur): Twenty per cent.

Shri Nath Pai: Twenty or 15, it is a sizable segment.

Shri K. D. Malaviya (Basti): One estimate is 20 per cent.

Shri Nath Pai: That is what I am saying. Nobody knows the exact figures, they are not scientifically assessed. So, I will not be dogmatic about this figure. But I would say that that shows the imperative necessity of controlling the rodent population and secondly increasing storage capacity.

[Shri Nath Pai]

Please listen to this list of respectable committees which demanded time and again, recommended that the requisite capacity be created in the country. From 1943 to 1964 there have been as many as 8 committees. Some of them are: The Foodgrains Policy Committee, the Famine Enquiry Commission, the Agricultural Prices Subcommittee, the Foodgrains Policy Committee, 1948, Government of India decision on Foodgrains Enquiry Committee. I am stopping because of paucity of time. All these recommended the minimum storage capacity that must be built in this country by the Government to hold these grains. And what happened?

The minimum would have been 5 million tons of silos to be built, storehouses and warehouses to be built. This was something which did not require priority from anywhere else except determination, it is the singular right of anybody to decide and determinedly follow it.

You showed great determination about a cause you believed in. Mr. Subramaniam resigned on an issue, about a cause which was dear to him. He proved that he was a great Tamilian. How much better if you had shown the same determination, that either you solve this problem or go out, not in the theatrical manner of some that your colleagues have done, but in a serious manner. The food problem of India can be mastered, solved. Other countries in the twentieth century have done it. I shall just briefly bring to his notice George Harrar's book, before I ask a question. He should look into that book *Struggle for the Conquest of Hunger*. And what has he to say? He says:

> "The simple truth is that we know enough today—now—to transform the food production of the world. So far as scientific knowledge is concerned, there is no longer any excuse for human starvation."

And he points out:

> "Twenty years ago Mexico's 20 million people averaged 1,700 calories a day. Today Mexico's 37 million people average 2,000 calories and they have a varied diet."

The population has almost been doubled, but the ration has not been cut. Their consumption standards also have expanded to the percentage of about 70, a respectable figure, by the use of new technology. You know the inputs, better seeds, better implements, better fertilisers, better credit, better marketing facilities—the remedies are known. Why do we keep then failing, and what are the likely consequences of this continued failure?

You tried and made a big effort, I am glad and I must congratulate you on the courage you showed. Having been confronted with the failure of agricultural and food policies over a period of time, which was not your failure, you were not restrained by dogmas. Foodgrains had to be imported. If we could get them from neighbouring countries, good; if not, from wherever that was available. You were not browbeaten, I think you showed courage in that. But that is not going to be the final solution. Even the Americans are getting wary of selling India foodgrains. Mr. Brown, in his confidential report to the President of the United States of America, warned the President, the Senate and the people of America, and the people of India, that we could not continually go on depending on the availability of surplus foodgrains from the American granaries. Their population is increasing, and they may need it. He has computed that 20 per cent of American surplus production is being consumed by India alone, and they may not be able to oblige India like that in future.

I would like to ask Mr. Subramaniam about this. These are failure of policy. We know, I need not repeat, the cause; we know the remedy. We have the

talent, we have even the administrative capacity, though the failure of the administration has been miserable. We lack the continued exercise of will, determination, discipline in tackling this problem.

You appointed the Food Corporation, but why did Mr. Pai resign? Very simple. You brought in a brilliant young man. I am not saying this because he is my name sake. I do not know the a, b, c about him. He is from another State, I believe. He is from Madras.

Shri C. Subramaniam: He is from Mysore.

Shri Nath Pai: I am from Konkan.

Shri C. Subramaniam: He also belongs to Konkan.

Shri Nath Pai: Many good men come from that area. We are a deficit area in terms of foodgrains, but not in producing good Indians. I know that. We have a plethora of them.

The reason given was that the Food Corporation was not allowed to function as it wanted to, independent of the Chief Ministers; the Food Corporation could not go and buy where it wanted, as it wanted, when it wanted. I think he will not contradict. This was the main thing. And today it continues too.

Then I come to rationing. On a long-term basis he should be prepared to take some unpleasant and temporarily unpopular decisions, rationing in the bulk of the urban areas and the deficit areas, not for a year, nor for two years, and it is no use going and telling Parliament again and again that it is going to cost, and it is going to take time. Were not 18 long years enough, and what is the cost of the Bengal Bandh and the Calcutta Bandh? Don't try to avoid, don't try to shirk the issues.

Frankly speaking, I require at least 20 solid minutes to make my submission, because I have not touched any of the aspects, and here is a massive Ministry. How many departments are there under him? I am glad you have brought them under one wing, but the results will have to be seen.

In conclusion, I will utter one warning. During the last confrontation with the Pakistan, we removed one of the canards against India. The canard against us used to be that five Indians did not make an equal of one Pakistani, but in the field of battle, we proved that one Indian is more than a match for anybody, but this victory in the field of battle will be whittled, scattered away, snatched away, destroyed, taken away, eroded, will fade away, if it is not proved in the factory and the field where grains are grown. So long as five Indian farmers are not to equal one American, one Australian or three Russians, the victory in the battle field of Punjab will be a pyrrhic victory. In the factory and in the fields, it will have to be proved.

Mr. Deputy-Speaker: The hon. Member should conclude now.

Shri Nath Pai: Mr. Deputy-Speaker, this is the last sentence. I am going to quote, not a revolutionary for your benefit but the man who coined the word 'pragmatic', the father of pragmatic philosophy, Francis Bacon. That is a warning for you and perhaps for all of us. We cannot afford to take the food shortage in a complacent manner as we take it. Either the government is panicky or self-complacent; it is never serious, dedicated. You will have to take the middle course.

> "The matter of seditions is of two kinds: much poverty and much discontentment. And if this poverty and broken estate in the better sort be joined with a want and necessity in the poor people, the danger is imminent and great. For the rebellions of the belly are the worst."

I hope we have had enough of minor kind of disturbances. Still with courage and vision we can tackle but we

[Shri Nath Pai]

will have to be ready to disregard the pulls and the pressures of the provincial satrapies. Treat this country as one whole unit; take the remedy with courage in hand, untrammelled either by dogma or provincial pressures.

श्री तु० राम: उपाध्यक्ष महोदय, सबसे पहले तो मैं आपको धन्यवाद दूं कि आपने मुझे बोलने का अवसर दिया । 18 साल के अन्दर हिन्दुस्तान एक कृषि प्रधान देश रहते हुए भी अन्न की समस्या का समाधान नहीं कर सका, यह तकलीफ़ की बात है । आखिर लाख कोशिश करने पर भी अपने लायक अनाज हम क्यों पैदा नहीं कर सके, इस पर आपको गहराई से देखना होगा कि गलतियां कहां हैं । आपने देश के अन्दर समाजवाद की बात चलाई और उसी सिलसिले में आपने हर स्टेट में लैंड सीलिंग, हद-बन्दी करने की बात चलाई और जमींदारी प्रथा को खत्म किया, ताकि सरकार और किसानों के बीच सीधा सम्पर्क हो, हमारी कृषि नीति अच्छी हो सके, पैदावार बढ़ सके और ज्यादा जमीन वालों से जो उसकी प्रोडक्शन को नहीं बढ़ाते हैं, जमीनें लेकर भूमिहीनों को जमीनें दे सकें । लेकिन, उपाध्यक्ष महोदय, मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि नीति तो बनाई गई, पालिसी तो बनाई गई, सीलिंग तो किया गया, लेकिन उस सीलिंग के अन्दर कुछ भी फीलिंग नहीं थी । एक बालिश्त जमीन भी भूमिहीनों को बिहार स्टेट में नहीं मिली, उस पर भी आपको आश्चर्य होगा कि बिहार के अन्दर एक कानून बना--बटाईदारी का, यानी जिसके पास श्रम करने की शक्ति है, जिसके पास केवल दो-तीन एकड़ जमीन है, लेकिन उस के पास श्रम शक्ति दस एकड़ की है, वह बटाईदारी करके अपने जीवन को अच्छे ढंग से चला सके । लेकिन इसका नतीजा क्या हुआ, प्रोडक्शन फिर भी नहीं बढ़ी, बल्कि गिरी है, लाख कोशिश करने के बाद, भी, आधुनिक तरीके से खेती करने के लिये प्रोत्साहित करने के बावजूद भी आज प्रोडक्शन क्यों नहीं बढ़ रही है ?

मैं एक गांव के किसान का बच्चा हूं और पिछले 18 साल से मैंने बहुत से चमत्कार देखे हैं, वही किसान हैं, वही जमीनें देख रहा हूं जो बचपन में देखी थीं और स्वराज्य के पहले देखी थीं, लेकिन मुझे दुख के साथ कहना पड़ रहा है कि स्वराज्य के बाद डैवलपमेंट पर जो पैसा खर्च किया गया, एग्रीकल्चर के लिये जो पैसा खर्च किया गया, किसानों और गांव वालों को भी उसका कुछ हिस्सा मिला हो, कुछ लाभ पहुंचा हो, ऐसा मुझे तो देखने को नहीं मिला । बटाईदारी कानून का नतीजा क्या हुआ ? एक तरफ़ तो बटाईदारी के हक़ को मजबूत करने के लिये एक कानून बनाया गया बिहार में, लेकिन दूसरी तरफ़ सारे के सारे बटाईदार लोगों को बेदखल कर दिया गया और हुकूमत चुप बैठी रही । आप जानते हैं कि उत्तरी बिहार और बिहार के अन्दर लोग सिंचाई के लिये नेचर पर डिपेण्ड करते हैं, हां, अब कुछ इरिगेशन की सुविधायें वहां करने जा रहे हैं, अब प्रकृति पर निर्भर नहीं करना होगा, सिंचाई का प्रबन्ध होगा, खाद का प्रयोग करेंगे, लेकिन उन किसानों को जो जमीन पर मेहनत करते थे हटा दिया गया, बटाईदारों को वहां से हटा दिया गया और वे किसान जिनमें शक्ति नहीं है कि पूरी खेती कर सकें, जमीन पड़ी रहती है लेकिन वे बटाईदारों को नहीं देते । खास कर पिछड़े हुए लोग, हरिजन, भूमिहीन लोग ही बटाईदारी करके गुजर करते थे, लेकिन उनकी सारी जमीनें छीन ली गई और इस तरह से आपका प्रोडक्शन रुक गया ।

मैं आपके माध्यम से सरकार से कहना चाहता हूं कि आज भूमि नीति में, कृषि नीति में आमूल परिवर्तन करना होगा । आप अगर चाहते हैं कि प्रोडक्शन बढ़े तो मेहनतकशों के हाथों में जमीन देनी होगी, जो मिट्टी से

मुहब्बत करते हैं । लेकिन हिन्दुस्तान में जमीन आज उनकी है जो मिट्टी पर जाने में, मिट्टी पर काम करने से नफ़रत करते हैं, तो फिर ऐसी स्थिति में आप प्रोडक्शन कैसे चाहते हैं । श्रम करने की कोशिश किसी के पास है और जमीन किसी के पास है, तो फिर कैसे उत्पादन बढ़ेगा, वह बढ़ नहीं सकता है । इसलिये एक इन्क्लाबी कदम, क्रान्तिकारी कदम उठाये हुए, कृषि नीति में आप सफल नहीं हो सकते ।

मुझे तो तकलीफ़ जब होती है जब पाकिस्तान का एटैक हुआ, हमला हुआ और पी० एल० 480, वह जो अमरीका का है, के सम्बन्ध में जब हमारे देश के ऊपर स्वाभिमान के खिलाफ़ बातें चलने लगीं तो हमारे देश के नेताओं ने अपील की कि साग और सब्जी पैदा करके खायेंगे, लेकिन हम तुम्हारे दबाव में नहीं आयेंगे, इस प्रकार का ऐलान किया गया । उसके बाद क्या हुआ कि कुछ एम० पी० लोगों ने अपने क्वार्टरों में साग-सब्जी लगाई और इस तरह से जो 100 रु० महीना वह बाजार वालों को देते थे, उस 100 रु० महीने का प्रोडक्शन अपने यहां ही कर लिया । लेकिन इससे तो समस्या हल होने वाली नहीं थी, मैं जब गांव में गया और वहां जाकर मैंने पूछा कि नेता लोगों ने जो एलान किया है कि देश के ऊपर संकटकालीन स्थिति आ गई है, देश की इज्जत और आबरू खतरे में है, तो क्या एग्रीकल्चर या कृषि आफिसर आपसे इस बारे में कुछ कहने के लिये गांव में आये थे, क्या आपको साग-सब्जियों की कुछ ऐसी फसलों के लिये जो जल्द से जल्द हो सकती हैं, उनके उगाने के बारे में कुछ नहीं बतलाया, तो गांव के किसानों ने कहा कि आज तक कोई भी आफिसर गांव में यह सब कहने के लिये नहीं आया । यह हमारे प्राइम मिनिस्टर का एलान था, हमारे बड़े बड़े नेताओं का एलान था, उस आवाज से आवाज मिला कर हम को चलना है, लेकिन उपाध्यक्ष महोदय, आज देश की यह स्थिति है कि संकल्प तो आप लेते हैं, प्रतिज्ञा तो करते हैं, बोल तो देते हैं, लेकिन कथनी और करनी में कोई सामंजस्य नहीं है । इसलिये चाहता हूं कि अगर आप देश की तरक्की करना चाहते है, तो मोह और माया को त्यागना होगा । इस देश को बनाने के लिये अब त्याग करने की आवश्यकता आई है--नेताओं और बड़े लोगों के लिये, तभी आप राष्ट्र को बचा सकते हैं, दूसरे देश के मुकाबले में अपने देश को खड़ा कर सकते हैं, नहीं तो यहां भूखे मरने की स्थिति पिछले 18 सालों से आती जा रही रही है और आगे भी 18 साल लग जायेंगे, यह स्थिति उसी प्रकार से बनी रहेगी ।

कृषि में आमूल परिवर्तन करके ही आप अनाज को पैदा कर सकते हैं और देश की जो 45 करोड़ की आबादी है उसको खिला सकते हैं । इसलिये हमें आमूल परिवर्तन करने ही होंगे ।

मैं कृषि के बाद अब सहकारिता पर आता हूं । सहकारिता क्या है ? आप यह देखते हैं, हमारे नेता लोग देखते हैं, आफिसर लोग देखते हैं कि कोआपरेटिव मूवमेन्ट करके क्या हुआ ? जापान ने इतनी तरक्की की, अमुक-अमुक देशों ने तरक्की की, हम उनकी कापी करते हैं, लेकिन क्या कभी यह भी सोचा कि देश के अन्दर इसको चलाने वाले लोग कैसे हैं, कार्यकर्ता कैसे हैं ? आप जानते होंगे, उपाध्यक्ष महोदय, पंडित जी कहते थे, हमारे आफिसर अपने को आफिसर न कह कर इस देश के सेवक कहें, हमारे प्रधान मन्त्री साहब तो इस बात को कह कर चले गये, लेकिन उनकी आत्मा को शान्ति नहीं मिलती होगी, क्योंकि अभी तक हम वफ़ादार होकर भी, सभ्य नागरिक होकर भी, आफिसर मनोवृत्ति को रखते हैं, किसानों के साथ सेवक के हिसाब से नहीं मिलते है, तो आज क्या हो रहा है ? क्या हाल है, इसको आप देखें । रजिस्टर पर आपने पांच हजार कोआपरेटिव सोसाइटीज दिखाई है । लेकिन अमल में उन

[श्री तु० राम]

में से कितनी सही अर्थों में काम कर रही हैं, जो उद्देश्य इस मूवमेंट का है उसको पूरा कर रही हैं, यह देखना बहुत जरूरी है । इने गिने लोग ही इन कोओपरेटिव्ज को चला रहे हैं । आपके पास कार्यकर्त्ताओं की कमी है । आप इनको रजिस्टर करके कागजों पर तो दिखला देते हैं लेकिन यह नहीं देखते हैं कि वे काम भी ठीक तरह से कर रही हैं या नहीं कर रही हैं। जो इनका उद्देश्य है, उसको पूरा भी कर रही हैं या नहीं कर रही हैं, जो उसूल है, जो परपज है, वह भी हासिल हो रहा है या नहीं हो रहा है । हम कोओपरेटिव्ज का अपने देश में विस्तार करना चाहते हैं । लेकिन आप देखें कि ये काम भी ठीक ढंग से करें । इनका उद्देश्य यह होना चाहिये कि एक समूह मिल कर अपनी रोटी और रोजी का इन्तजाम करे, जो उसके सदस्य हैं, सब के हित का काम वहां हो और लोग कदम-ब-कदम मिला कर चलें । अगर आप चाहते हैं कि ये हमारे देश में पनपें और आप वाकई में सहायता करना चाहते हैं तो अगर दस कोओपरेटिव्ज भी हर प्रान्त में या जिले में बन जायें और वाकई में जिन के लाभ के लिए बनाई जायें उनका फायदा हो तो कोओपरेटिव मूवमेंट बड़ी लाभदायक सिद्ध हो सकती है । लेकिन आज लोगों की इनके प्रति क्या भावनायें हैं? वे समझते हैं कि ये कर्जा दिलाने वाली संस्थायें हैं । यही भावना गांवों के अन्दर भी है । कर्जा लेने में भी जो कठिनाई होती है उसको भुक्तभोगी ही जानता है । इसको या तो आप कोओपरेटिव का जो अधिकारी है उससे पूछें या उसका जो मैम्बर है उससे पूछ कर देखें । होता यह है कि लोगों को एक टेबल से दूसरे टेबल पर चक्कर काटने पड़ते हैं कर्ज प्राप्त करने के लिए और आखिर में उनको मिलता है आधा या एक चौथाई । बाकी का बीच में ही चला जाता है । देश में करप्शन का बोलबाला है, भ्रष्टाचार पनप रहा है । इस भ्रष्टाचार को भी आपको रोकना होगा । साथ ही साथ कोओपरेटिव्ज को आप कागजों तक ही सीमित न रखें । कागजी कार्रवाई पर ही आप सन्तोष मान कर न बैठ जायें । अगर आपने इनको कागज तक ही सीमित रखा तो धरती पर कब उतरेंगी और और किस तरह से लोगों को फायदा होगा । अगर आप इस कोओपरेटिव मूवमेंट को कामयाब बनाना चाहते हैं तो आप देखें कि सफेदपोश किसान जो हैं उनको ही इनसे लाभ न पहुंचे या दूसरे जो सफेदपोश लोग हैं उनको ही लाभ न पहुंचे बल्कि मामूली किसान जो हैं, जो मेहनत मजदूरी करते हैं उनको भी इन से लाभ पहुंचे ।

आप खेती में उन्नति करना चाहते हैं और उत्पादन बढ़ाना चाहते हैं । जापानी मैथड की बात भी आप करते हैं । आप लोगों को जापान आदि देशों में भी भेजते हैं । मैं चाहता हूं कि जब आप किसानों में इस मैथड का प्रचार करने के लिए या कोई और प्रचार करने के लिये जायें तो किसान की भाषा में बात करें । यह भी कोई जरूरी नहीं है कि अंग्रेजी बोलने वालों को, टाई बांधने वालों को, पेंट पहनने वालों को ही आप विदेशों में भेजें । जो फावड़ा नहीं उठा सकते हैं, जो हल लेकर जुताई नहीं कर सकते हैं, उनको आप विदेशों में भेज देते हैं । फटेहाल किसानों को जो खेती करते हैं, नहीं भेजा जाता है । उनको आप भेजें ।

उपाध्यक्ष महोदय : अब आप समाप्त करें ।

श्री तु० राम : मैं साल में एक दो बार बोलता हूं, इस वास्ते मुझे पांच मिनट और दिये जायें ।

सामुदायिक विकास की बात की जाती है । उन्नत खेती, उन्नत बीज और हरियाणा के बैलों की बात भी की जाती है और इनके प्रयोग से उत्पादन बढ़ाने की बात की जाती है । लेकिन आप देखें कि इनको प्रयोग में लाने के लिए कौनसी भूमि एक्वायर की जाती ह । वैस्ट जो लैंड होती है, उसको एक्वायर किया

जाता है । पुरानी पद्धति से और पुरानी प्रणाली से जो किसान खेती कर रहे हैं, हजारों बरस से खेती करते आ रहे हैं उनकी एवेज पैदावार अधिक होती है जबकि उनके साधन सरकारी खेती की तुलना में कम हैं । उसकी बगल में ही आप हरियाणा के बैल, उन्नत बीज और उन्नत हल का प्रयोग करते हैं । कौन अभागा किसान होगा जो कि अपनी खेती की तरक्की न करना चाहता हो, जो कि अपनी खेती की पैदावार बढ़ाना न चाहता हो । लेकिन उसको साधन मुहैया नहीं किये जाते हैं । उसको जिन साधनों की आवश्यकता होती है उनका समय पर प्रबन्ध नहीं किया जाता है । आप बढ़िया जमीन एक्वायर करके वैज्ञानिक ढंग से उसमें खेती करना चाहते हैं । आप क्यों नहीं मरुभूमि को लेते हैं ? उसको लेकर आप यह करके दिखायें कि इस तरह से इसमें पैदावार की जा सकती है । जो भूमि आप लेते हैं वह पहले से ही उर्वरा भूमि होती है और थोड़ी सी अगर उसमें मेहनत की जाए तो वह काफी अच्छी पैदावार करके आपको दे देती है । इससे किसान प्रभावित नहीं होता है । आप उसको प्रेरणा दें, आप उसकी शक्ति को मोबिलाइज करें आप उसमें हिम्मत पैदा करें और वह ईमानदारी से आपको पैदावार ज्यादा बढ़ा कर बता देंगे ।

उपाध्यक्ष महोदय : श्री एस० बी० पाटिल ।

श्री तु० राम : मैंने अभी समाप्त नहीं किया है । मैं यह...

उपाध्यक्ष महोदय : आर्डर, आर्डर ।

Shri S. B. Patil. As there are a large number of Members wishing to speak, I have no objection to sit beyond 6 O'clock.

Shri S. B. Patil (Bijapur South) Mr. Deputy-Speaker, Sir, at the outset I am very thankful to you for having given me time to speak on the Demands for Grants under the Ministry of Food and Agriculture.

Mr. Deputy-Speaker: We can sit beyond 6 O'clock. As long as Members are there to speak, I will sit, even beyond 6 O'clock.

Shri S. B. Patil: I am much thankful to the hon. Deputy Minister in the Ministry of Food and Agriculture, Shri Shyam Dhar Misra, for his speech and congratulate him for the various steps which they have undertaken or which they propose to undertake for the purpose of increasing food production within the country, within the limited resources.

I would try may best to review the situation as a practical agriculturist, mainly from the practical point of view. Agriculture in India is the biggest industry which is supporting 76 per cent of the total population.

16.36 hrs.

[SHRI SHAM LAL SARAF *in the Chair*]

Shri Bhagwat Jha Azad (Bhagalpur): Sir, I want to know whether you will call those Members who are able to catch your eye, or you are bound down by the list which you already have and you will call from the list.

Mr. Chairman: Why should he presuppose my decision?

Shri Bhagwat Jha Azad: Good; that is what we want, Sir.

Mr. Chairman: I would request hon. Members from the Congress party not to take more than a maximum of ten minutes each, so that a number of hon. Members will be accommodated. Secondly, as far as hon. Members from the Opposition groups are concerned, they will have their time, but not a minute more.

Shri S. B. Patil: Agriculture contribute 50 per cent of the national income. The per capita land in our country works out to less than an acre in our country. Very little addition to the cultivable area is possible. We

[Shri S. B. Patil]

cannot depend upon findings more and more cultivable land for increased agricultural production. We have already reached the limits of available arable land. The only way for the country is to increase the per acre yield and to the extent possible by increasing the output per man-hour.

Then, despite our planning, India's progress has been the poorest in the whole world. During the three Five Year Plans, though the overall progress has been substantial, it has not kept pace with the population, the production target and the needs of the country. In the first Plan, the target of 2.8 per cent average annual growth rate was realised, but the agricultural growth in the second Plan rose by only 3.9 per cent annually, against the target of 5.5 per cent. In the third Plan, it rose only by 2.8 per cent annually against the target of six per cent.

The main reason for the failure to achieve the plan targets has been lack of systematic and detailed planning area by area, particularly at the village level. Food production in 1965-66 is expected to be only 74 million tons against the third Plan target of 100 million tons. Our failure in bringing about rapid increase in agricultural production in the face of the population explosion and rising incomes is leading to an economic crisis.

Sir, there are great possibilities and opportunities for increasing food production in our country by adopting new technological farming methods, better organisation and training. Fuller use of the existing irrigation facilities and available fertilisers and pest control methods are necessary in our country. By adopting the extension of rural education research, by adopting the extension of advisory services, by adopting adequate credit system, many advanced countries in the world, such as New Zealand, Australia, Japan, West Germany and U.S.A. have achieved a high level of production in the agricultural front. Only 14 per cent of the population in New Zealand work on land, but each farmer in New Zealand produces enough to feed about 96 people. In India, 78 per cent of the population work on land, but they cannot produce enough food to feed themselves.

The level of productivity in India is not comparable with the advanced countries of the world. The yield per heetare, i.e., 2-1/2 acres, of wheat and rice in the various countries are as follows (in quintals):—

	Rice	Wheat
Japan	52.6	25.4
Taiwan	33.1	20.7
U.A.R.	58.4	26.1
Australia	60.8	48.4
India	13.8	8.9

For increasing the yield per acre, I want to make the following suggestions. Firstly, seeds responsive to heavy doses of fertilisers should become available in large quantity. Secondly, adequate irrigation facilities should be provided. Thirdly, requisite quantities of fertilisers for optimum application to the land should be made available. The low per-acre yield in India is mainly due to low fertility of our land. It is estimated by experts that one ton of nitrogenous fertilisers put in the land produces additional 10 tons of foodgrains. Application of adequate quantities of fertilisers to the land is the only effective means for increasing production.

Our objective must be to achieve self-sufficiency in food within our country, within the limited resources of our own in order to feed our population. Dependence on PL-480 imports is not only bad for the economic development of our nation, but it undermines also our self-confidence and self-respect. We must stand on our own legs and a beginning has to be made now towards self-sufficiency.

The deficit of about 8 per cent in our food production is provided by imports. It is possible to make good the deficit provided the Government can make an all-out effort sincerely. The success of food production targets depends on irrigation, supply of fertilise s at reasonable rates, improved and high-yielding varities of seeds and adequate and timely credit to the farmers.

I now come to the programme of high-yielding varieties of food crops. The entire strategy centres on high-yielding varities of crops like Taichung Native No. 1 and 65 in paddy, Mexican Sorara 64 wheat, hybrid jowar, bajra and maize. These varieties have a build up based on scientific data.

Both in our experimental stations and in the fields of progressive farmers, it has been possible to produce more than 2 tons of wheat or jowar or maize or bajra per acre by using hybrid seeds or Mexican wheat 64 seeds. In my own farm, I produced 41 quintals of hybrid jowar in one acre, including the *ratoon* one. As far as the production potential is concerned, the future is one of hope and optimism. This programme will add another 25 million tons to our food production and wipe out our food deficit by 1970-71, according to the Ministry's report. There are 62 million acres in India with good irrigation facilities and it should not be difficult to produce a minimum of 2 tons of foodgrains per acre in such areas provided the requisite inputs are available.

However, I am not happy with the prices fixed by the various States at the producer's level. The low prices for his produce at the cost of the farmer will not bring increased food production. The farmer must be guaranteed a remunerative price for his produce. The next step must be to make things cheaper for the agriculturist so that he could agree to bring down the prices of his produce to a level within the resources of the common people.

Food must be treated as a national subject and the whole nation must be treated as one zone. No one should have the right to hold up others.

Lastly, I welcome the expressed policy of the Government to achieve self-sufficiency in food by using high-yielding varieties of seed by the end of the fourth plan through a detailed programme of action.

With these words, I support the demands.

श्री हुकम चन्द कछवाय : माननीय सभापति महोदय, हमारे देश में खाद्य समस्या बड़ी जटिल है और यह सरकार की कुछ गलत नीतियों के कारण जटिल बन गई है। सरकार के जो आंकड़े एकत्र करने के तरीके हैं यह बड़े गलत तरीके हैं और यह वास्तविकता से बिलकुल परे हैं। मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारी प्रधान मंत्री अभी जब विदेश की यात्रा पर गई थीं तो लन्दन में एक संवाददाता को उन्होंने बताया इवनिंग स्टैंडर्ड अखबार निकलता है, उसमें छपा है, जिसमें उन्होंने कहा है कि भारत में खाद्य समस्या कोई जटिल समस्या नहीं है। यह जटिल बनाई गई है। तो मेरी समझ में नहीं आया कि हमारे मंत्री महोदय जो आंकड़े बताते हैं कि 140–150 मीटरिक टन खाद्यान्न की कमी है, प्रधान मंत्री का वक्तव्य और खाद्य मंत्री का वक्तव्य इन दोनों में कितना अन्तर है, इनमें से कौन सा सही माना जाये ? परन्तु हमारी सरकार ने आज जो नीति अपनायी है, हम ने देखा कि केरल के अन्दर अनाज की कमी थी और उनके आन्दोलन करने के बाद उन्हें अनाज पहुंचाया गया, तो सरकार स्वयं चाहती है कि लोग आन्दोलन करें, लोगों में उत्तेजना हो, लोग तोड़ फोड़ करें तब उसके बाद उन्हें खाने को दिया जाये।

सभापति महोदय : मैं माननीय वक्ता से प्रार्थना करूं कि जो बहस हो चुकी हो उसको अलग रखकर नयी बातें कहने की

[सभापति महोदय]

कोशिश करें तो उसमें आपको ज्यादा फायदा होगा । यह बातें कही जा चुकी हैं ।

श्री हुकम चन्द कछवाय : मैं यह कहना चाहता हूं कि सरकारी नीति बिलकुल दोषपूर्ण है । उस के कारण यह समस्या देश में पैदा हुई है । आज सरकार इस बात पर जोर देती है कि विदेशी खाद इस देश में लायी जाये और उसके द्वारा काफी पैदावार बढ़ायी जाये । मैं आप को बताऊं कि विदेशी खाद का उदाहरण अमेरिका के सामने है कि इस खाद के कारण जमीन कितनी जल गई, कितनी खराब हो गई ? दो चार साल तो अच्छी उपज हुई, परन्तु उसके बाद जमीन पैदावार के काबिल नहीं रह जाती । अगर मंत्री महोदय यह चाहते हैं कि उनके मन्त्रित्व काल में दो चार साल तो अधिक अनाज पैदा हो और बाद में आने वाली पीढ़ी उनका मुह देखती रहे, वह कुछ भी पैदावार न कर सके तो उसके बारे में तो मुझे कुछ नहीं कहना है लेकिन मंत्री जी को अपनी नीति कुछ ऐसी बनानी चाहिए जिसमें भविष्य के बारे में भी सोचना चाहिए । आज हम को उत्पादन, वितरण और मूल्य इन तीनों बातों पर विचार करना है । उत्पादन के लिए किन किन चीजों की आवश्यकता है देश के अन्दर और कौन सी आवश्यकता काश्तकार की हमें पूरी करनी है, यह हमें देखना है । हमें उसको खाद देनी चाहिए, उर्वरक, कम्पोस्ट, हरी खाद और बीज तथा पानी यह तीन चार चीजें बहुत आवश्यक हैं सभापति महोदय, लेकिन सरकार खाद अगर देगी और पानी उसने नहीं दिया तो उसका यह काम भी बड़ा दोषपूर्ण रहेगा । यह जो विदेशी खाद होती है जो मशीनों से बनाई जाती है, इसी पर हमें निर्भर नहीं रहना है । ऐसी स्थिति हमारे यहां पदा नहीं होनी चाहिए कि हम खाद के लिए भी बदेशों की तरफ देखें । हमारे देश में जो खाद पदा होती है, विशेषकर हरी खाद, उस पर ज्यादा जोर देना चाहिए। मंत्री महोदय ने कहा कि हम मोटे अनाज का क्षेत्र बनाने जा रहे हैं—पंजाब, दिल्ली और उत्तर प्रदेश । यह अभी मंत्री महोदय ने बताया । तो मैं कहना चाहता हूं कि आप इन तीन स्थानों का ही क्यों एक क्षेत्र बनाना चाहते हैं ? आप सारे देश का क्यों नहीं बनाना चाहते हैं ? इस के एक मोटे उदाहरण-स्वरूप मैं आप को बतलाऊं कि इस जोन प्रथा से हमें कितनी हानि हुई है ? राजस्थान को हम देखें । वहां 6 लाख टन चना रुका हुआ है । 6 लाख टन चना पड़ा पड़ा सड़ गया किसी काम में नहीं आया और वह मिट्टी के भाव मिट्टी में मिलाया जा रहा है । यह जो आप की क्षेत्रीय प्रणाली है इस जोन प्रथा को खत्म करना चाहिए ।

दक्षिण के जो चार प्रान्त हैं उस के लिए भी कुछ लोगों ने चर्चा की थी कि दक्षिण के इन चार राज्यों के लिए चावल के लिये एक क्षेत्र बनाया जाये उनका एक जोन बनाया जाये । लेकिन माननीय मंत्री इस बात से इंकार कर गये क्योंकि वह नहीं चाहते थे कि वहां पर जोन तोड़े जायें और चार प्रान्तों का एक जोन बनाया जाये । माननीय मंत्री जो मद्रास से आते हैं और मद्रास के ही हमारे कांग्रेस अध्यक्ष हैं यह दोनों ही नहीं चाहते हैं कि इन चारों प्रान्तों का एक जोन बनाया जाये । मद्रास के मुख्य मंत्री की असहमति के कारण क्षेत्र नहीं बन रहा है । मैं आप को बतलाऊं कि आंध्र में 80 रुपये क्विंटल चावल बिकता है, मद्रास में 85 रुपये क्विंटल, मैसूर में 125 रुपये क्विंटल और केरल में 200 रुपये क्विंटल बिकता है । इस का क्या कारण है ? मैं पूछना चाहता हूं कि केन्द्र का क्या केरल में वर्चस्व नहीं है या केरल के लोग काफ़ी धनी हैं इस कारण से आप उन्हें 200 रुपया क्विंटल देते हैं और माननीय मंत्री जहां से चुन कर आये हैं उन्हें आप 85 रुपया क्विंटल देते हैं ? क्या कारण है इतना मंहगा देने का ? केवल

राजनीतिक स्वार्थ और अपने चुनाव का उल्लू सीधा करने के लिए ऐसा किया जा रहा है। मैं माननीय मंत्री से कहना चाहता हूं कि इस चीज को खत्म करें। चूंकि मद्रास के मुख्य मंत्री नहीं चाहते और कांग्रेस अध्यक्ष भी वहां के हैं इसलिए केन्द्रीय खाद्य मंत्री ने उन के दबाव में आ कर इस बात को स्वीकार नहीं किया। अब दिन पर दिन केन्द्र मुख्य मंत्रियों के दबाव में आता जा रहा है। केन्द्र पर मुख्य मंत्री हावी होते जा रहे हैं। मुख्य मंत्रियों के आदेश पर केन्द्रीय शासन चलता जा रहा है।

जयपुर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। वहां पर एक प्रस्ताव पास किया गया कि सारे देश में जो जोन प्रथा है उसे समाप्त किया जाये। यह बात तय हो गयी। उस के बाद यहां आने पर मुख्य मंत्रियों का सम्मेलन हुआ। उस के दबाव में आकर फिर से इस बात को कह दिया कि भाई हम जोन तोड़ना नहीं चाहते। उसका दुष्परिणाम हम देख ही रहे हैं कि कहीं तो चना पड़ा सड़ रहा है और दूसरी जगह इस प्रकार की कठिनाई अनुभव की जा रही है लेकिन माननीय मंत्री चुप बैठे हैं।

मैं एक दूसरी बात कहना चाहता हूं कि आज उत्पादन बढ़ाने के लिए हम ने कितनी प्रगति की है? इन तमाम सालों में हम ने जो इस दिशा में प्रगति की है उससे हमें अधिक प्रगति करनी चाहिए थी। इस के लिए सरकार ने कुछ योजना बनाई है। उस के लिए कुछ पौकेट्स बनाये हैं, कुछ स्थानों पर खेती के काम पर ज्यादा जोर दिया जायेगा। लेकिन मैं समझता हूं कि कुछ खेतों को ही पैकेज प्रोग्राम के लिये चुनने की बजाय अच्छा हो कि ज्यादा से ज्यादा खेती की पैदावार सभी जगह बढ़ाने की कोशिश की जाय। आप केवल कुछ पौकेट्स ही क्यों बनाते हैं? आप सारे देश में ही इस काम को क्यों नहीं चालू करते हैं? आप का कहना है कि हम ट्रक्टर्स से खेती करेंगे लेकिन आप के पास ट्रैक्टर्स पर्याप्त मात्रा में नहीं हैं। जिन काश्तकारों के पास थोड़ी थोड़ी जमीन है 20, 25 और 30 बीघे है वह ट्रैक्टर्स नहीं खरीद सकते हैं उन्हें अच्छे बैलों की जोड़ी चाहिये। आज अच्छे बैलों की जोड़ी मिलती नहीं है। पशुधन की देश में रक्षा व उन्नति हो इस बारे में हम ने अनेकों प्रश्न कई कई बार पूछे हैं। यह बड़े खेद का विषय है कि पशुधन का नाश हो रहा है। काफ़ी तादाद में बल काटे जाते हैं। हमारे देश में आज दुर्भाग्यवश ऐसे देश-द्रोही भी मौजूद हैं जो गायों और बैलों को चराने के नाम से पहाड़ों में ले जाते हैं और वहां से तिब्बत में बेच देते हैं। राजस्थान पंजाब और सौराष्ट्र से पशुओं की निकासी हो रही है और गायों को पहाड़ों पर ले जाकर तिब्बत में बेचने का धंधा करते हैं और देश से पशुधन समाप्त होता जा रहा है। हालत यह है कि जो गाय 400 रुपये में मिलती है वहां जाकर वह 1000 रुपये में पड़ती है। इस तरह का बिजिनेस वह लोग करते हैं।

मैं माननीय मंत्री जी से कहना चाहता हूं कि उन्होंने विदेशों से डेढ़ करोड़ टन अनाज मंगाया है। क्या आप ने इस बात पर विचार किया है कि विदेश से जो गेहूं आयेगा उस का असर यहां के काश्तकारों ने जो अनाज पैदा किया है उन के मूल्यों पर नहीं पड़ेगा? आज सब से बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि यहां के जो काश्तकार हैं उन्हें पर्याप्त मात्रा में उन की उपज के उचित मूल्य मिलें, लाभकर मूल्य मिलें। उन की पैदावार के दाम ठीक ढंग से मिलने चाहिएं इस बात की ओर सरकार ध्यान दे। अगर किसानों को उनकी उपज के उचित दाम मिलेंगे तो हमें आशा है कि काश्तकार काफ़ी अच्छे ढंग से पैदावार करेगा। लेकिन आज देश में उतनी कमी नहीं है जितनी कुछ राजनीतिक लोगों ने जानबूझ कर बनाई हुई है। मेरा विश्वास है कि माननीय मंत्री जोन प्रथा को खत्म कर ही देंगे। कुछ लोगों ने यह आशंका व्यक्त की है कि जोन खत्म कर दिये गये तो अनाजों

[श्री हुकम चन्द कछवाय]

के मूल्य बढ़ जायेंगे। अब मैं आप को बतलाऊं कि गुड़ पर प्रतिबंध लगा था। उत्तर प्रदेश में जिस भाव से गुड़ मिलता था उस से ज्यादा भाव राजस्थान में उस का बनता था और राजस्थान में जिस भाव से गुड़ बिकता था उस से ज्यादा मूल्य में गुजरात में वह मिलता था। जब आप ने उस का प्रतिबंध तोड़ा तो पहले कुछ दिनों तक तो कठिनाई जरूर हुई लेकिन आज क्या हालत है? शुरू शुरू में तो कुछ दिन कठिनाई महसूस होती है लेकिन बाद में उसकी समस्या समाप्त हो गयी। हो सकता है कि कुछ दिन लोगों को मंहगे भाव से मिलने में कठिनाई होगी लेकिन मेरा कहना है कि मंहगे भाव पर ही मिले लेकिन उसको ठीक प्रकार से और समय पर तो मिल जाता है।

मैं एक अन्य बात कहना चाहता हूं। आप ने जो राशन लागू किया है उस में काफी पक्षपात किया है। अब जो शारीरिक परिश्रम करने वाले लोग हैं और जो दफ्तर में लिखने पढ़ने वाले लोग हैं उन के भोजन की मात्रा में अन्तर होता है क्या इस का अनुभव सरकार को नहीं है? लेकिन मुझे तो इस बात का अनुभव है कि दोनों वक्त शारीरिक परिश्रम करने वाले और कलम का काम करने वाले इन दोनों में जमीन आसमान का अन्तर है। इस अन्तर को ध्यान में रखते हुए इन्हें राशन देना चाहिए। मेरा कहना है कि जहां राशन लागू किया है वहां पूरा राशन दिया जाय। कम से कम 3400 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रति सप्ताह राशन देना चाहिए।

अब काश्तकारों को कर्जा देने की जहां तक बात है उन्हें सस्ती दर पर कर्जा दिया जाये। किसानों को कर्जे की जरूरत है। सहकारी समितियां दे नहीं पातीं। तकावी थोड़ी है। जरूरत है कि गांवों में बैंकों की शाखायें खोली जायें साथ ही किसान को फसल का पूरा मूल्य दिया जाये। तकावी जो कम है उसे बढ़ाया जाय ताकि ज्यादा से ज्यादा लोग उस का लाभ ले सकें। गांवों में बैंकों की अधिक से अधिक शाखायें खोली जायें। मैं माननीय मंत्री से कहूंगा कि आज किसानों की जो जरूरत है उस को ध्यान में रखते हुए उन की जो सहूलियतें हैं और उन्हें जो चीजें देनी चाहिएं वह पर्याप्त मात्रा में उन्हें हमें सुलभ करानी चाहिएं। खेती के क्षेत्र को हमें अधिक से अधिक बढ़ाना चाहिए। आज खेती के अन्दर क्रान्तिकारी परिवर्तन होना चाहिए इस बात की मांग देश में काफी जोरों से है। जब पाकिस्तान ने आक्रमण किया उस समय कितनी गति के साथ हम ने उस से मुकाबला करने के लिए सभी प्रकार के साधन जुटा कर देश की जनता को तैयार किया। मैं चाहता हूं कि उसी गति के साथ उसी बार लैविल पर यह खेती का काम हाथ में लिया जाये। आज जितनी भी बंजर या पड़ती जमीन पड़ी है उसे जोत कर कृषि योग्य बनाया जाये और सभी स्थानों में खेती होनी चाहिए। अधिक से अधिक लोग खेती में लगें। आज देश में बेकारी है और वह भी इस तरह से हल हो जायेगी।

माननीय मंत्री का मंत्रालय पशुधन से सम्बन्धित है और मैं वर्षों से चली आ रही उस पुरानी मांग को आज फिर दुहराना चाहता हूं कि गोवध देश में नहीं होना चाहिए। इस सम्बन्ध में इस सदन के एक माननीय सदस्य पंडित ठाकुर दास भार्गव ने काफी अर्सा पहले इस सदन में कहा था कि 1947 के पश्चात् पौने 8 करोड़ रुपये का दूध कम हो रहा है। पौने 8 करोड़ रुपये की हानि इस देश में हुई है। मैं यह पुनः मांग दोहराता हूं कि यह गऊ वध होना ही नहीं चाहिए और वह कानून द्वारा बंद किया जाये। आज न तो हर एक काश्तकार के पास ट्रैक्टर्स खरीदने की ताकत है और दूसरे छोटी छोटी जमीनों में ट्रैक्टर्स काम भी नहीं देते। इसलिए किसानों के लिए आसानी पर बैलों की जुताई ही सबसे

अच्छा साधन है । माननीय सदस्यों ने भी यहां पर बहुत सी बातें कही हैं कि जो काश्तकार अपने बैलों की जोड़ी से काश्त करते हैं वह ज्यादा अन्न पैदा करते हैं । इसलिए जरूरत इस बात की है कि आपके द्वारा उन्हें अच्छे बैलों की जोड़ी का साधन प्रदान किया जाये ताकि अधिक से अधिक लोग बैलों की जोड़ी के आधार पर खेतीबाड़ी करें और उत्पादन में वृद्धि करें । काफ़ी तादाद में इस देश में ऐसे लोग हैं जिन काश्तकारों ने काफ़ी परिश्रम करके खेती में उन्नति की है लेकिन आप उन्हें उस के लिए प्रोत्साहन नहीं देना चाहते और उन्हें अच्छे बीज, खाद व पानी की बढ़ी हुई सुविधाएं नहीं देना चाहते ।

राजस्थान के पास का इलाका एक ऐसा इलाका है जहां अभी कुछ दिन पहले अमरीका के एक विशेषज्ञ आये थे और उन्होंने पानी की समस्या को वहां पर देखा था । उन्होंने देखा कि यहां एक कुआं खोदने के लिए ट्यूबवैल लगाने के लिए 15–16 हजार रुपया खर्च होता है । उन्होंने राय दी कि यदि 15–16 लाख रुपये यहां खर्च किये गये तो पाइप लाइन से राजस्थान में पानी 15–16 करोड़ रुपये की लागत में आने का अनुमान है ।

यह जो सारा 15–16 करोड़ रुपया आपका पाइप लाइन से राजस्थान में पानी लाने पर लगेगा वह वहां की एक साल की पैदावार में ही वह तमाम आपका रुपया वसूल हो सकता है लेकिन सरकार इस ओर ध्यान नहीं देती । केवल ट्रैक्टरों की ओर ध्यान देने से ही काम चलने वाला नहीं है । किसानों को अधिक उत्पन्न करने के लिए पानी चाहिए, अच्छे बीज चाहिएं, हरी खाद चाहिए । बजाय इसके कि हम अपने देशवासियों का पेट भरने के लिए विदेशों से भीख मांगते रहें हमें उसे खत्म करना चाहिए और किसानों को देश में अधिक अन्न उपजाने के हेतु प्रोत्साहन और सभी आवश्यक सुविधाएं प्रदान करनी चाहिएं ।

राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश, ये तीन-चार ऐसे प्रान्त हैं, जो काफ़ी तादाद में अनाज पैदा कर सकते हैं, लेकिन आप काश्तकारों को प्रोत्साहन दीजिये, उन्हें पानी दीजिये ।

मैं समझता हूं कि माननीय मंत्री जी ने मेरा भाषण बड़े ध्यान से सुना है और अपना वक्तव्य देते समय जो मैंने सुझाव दिये हैं उन पर अमल करेंगे और मेरे प्रश्नों का उत्तर देंगे ।

Shri Rajeshwar Patel (Hajipur): Mr. Chairman, there is hardly any member in this House who would disagree with Shri Kachhavaiya in his hope that there would be self-sufficiency in our food targets if only we would be able to supply water to Rajasthan, Madhya Pradesh and certain other areas which are not able to do their best.

I have been carefully listening to the speeches made today and yesterday and, for the matter of that, I have been doing it for the last fifteen years, and it is not merely in the budget estimates that we discuss the problems of food and agriculture; there is hardly a session every year when, for some reason or other, the food situation in the country does not come in for discussion.

I have tried to understand the problem of food and agriculture and I have been a close student of the subject for nearly over two decades. The other day Shri Subramaniam, while speaking in Coimbatore, made an observation, and I hope he was correctly reported. He said:

> "We cannot be depending on food imports always and it is a matter of shame that we have still to accept outside help to get over the food crisis."

He said:

> "The recent crisis was the final warning to the country to set

[Shri Rajeshwar Patel]

matters right and, if this occurred again, there would be chaos and utter confusion."

He is bold enough to make this bold statement. But, many a time, a large number of his predecessors have indulged in similar observations. So, Shri Nath Pai need not have taken the trouble of quoting some American writers as to what hunger may mean to this country. He must be fully aware of the fact that chaos is the only thing following failure on food front.

The question that I ask myself is whether this so-called recent crisis was necessary to awaken us into any kind of activity. I thought that the 1943 famine of Bengal was a pointer in this direction. We have been in charge of the affairs of this country and it is expected of any country, particularly an agricultural nation like India, that before we start dreaming about, or thinking in terms of, atom bombs and other things, we shall at least have taken a little good care about the basic requirements of the people who inhabit this country.

A few minutes back Shri Shyam Dhar Misra gave us, rather regaled us I should say, with facts and figures. He said that we have already achieved an irrigation capacity of 195 million acres.

Shri Shyam Dhar Misra: Irrigation potential.

Shri Rajeshwar Patel: How much have you reached?

Shri Shyam Dhar Misra: 90 million.

Shri Rajeshwar Patel: If 90 million acres of land have really irrigation facilities, I fail to understand why should this country be producing only 84 million tons.

Here I would like to make a reference to Bihar. A request was made to the Chief Secretary to the Government of Bihar, when he was the Development Commissioner, to find out what are the tanks and other water resources in one particular district, Gaya, which have gone out of use because they have not been taken care of when we took the reins of this Government. He conducted a very thorough survey and came to the conclusion that Rs. 500 crores would be needed to put those sources of irrigation back in order. So, we can realise that while we propose through these grandiose schemes, river valley projects, to add to the irrigation potential of this country, we have been sadly neglecting the existing sources of irrigation.

Some hon. Members have suggested that in view of the failure of the Government, both at the Centre and in the States, to get the plans implemented, it is necessary that some effort should be made to decentralise agriculture. The point that I want to urge upon the Government is that decentralisation, as it is understand today, is not the remedy. The remedy that I may suggest may sound almost foolish to the all-knowing persons on the Treasury Benches and the Agriculture Ministry, but I would still venture to suggest that if only the Government of India and the State Governments withdrew themselves from the field of agriculture, if they ceased to be the instructors and guides of peasants, who any time know better than any one of them or all of them put together, if they only withdrew themselves and let the people help themselves, by giving them the wherewithal, by providing them with required credit, the result will be startling. There are hardly a few thousand mills and factories in this country. We have umpteen sources for financing them. Do we realise that there are 7 crores of factories in our farms, there are 7 crores of families and the pittance of credit that is made available to them through all kinds means reach only those who do

not need that credit, when it is distributed through the agencies of the State Government as taccavi loans or credit to the co-operative societies? It does not mean anything to 90 per cent of the farmers of this country.

Shri Misra was proud to impress upon this House that agriculture alone was responsible for an exchange earning of the tune of nearly Rs. 500 crores a year. That is in spite of you. If they had been producing and earning foreign exchange, it is in spite of the Government of India's best efforts to thwart all the efforts of the poor farmers.

We forget that the real problem of this country is not production, is not fertilizer; it is the question of emphasis, it is the question of recognition. All these years we have been trying to build up, what I call, the extension of Europe, the European culture, urban India, big industries; the little man is hardly of any concern for us. The other day Shri Mehr Chand Khanna was proudly saying—and none of them objected to that—that the Government has decided that Delhi will be a beautiful city and the *jhuggiwallas* must go and that the Government is going to follow and achieve its objective. Well and good. He is welcome to do whatever he likes. The little urchins, the sons of these labourers, who are helping the building up of the air-conditioned mansions in which you and I work, they may as well be exposed to the hot sun and hot wind of Delhi; it is none of his concern. But how do they happen to trek into these cities? Why do they come here? Unemployment that prevails in the rural side is the real cause. It is not that they want to be here to be treated like rats and unwanted animals and so they throng big cities like Bombay, Calcutta and Delhi.

So, the question is that the Government should decide whether it is the urban India, the big industries, that we are pledged to build or we have to build the villages. If Gandhiji's dream to make India and Indian Swaraj meaningful has any idealism and any appeal left to this Government and to ourselves, we will have to make up our mind that we have to do everything to see to it that the rural man, who not only produces food but also fibres and other raw material for the factories on which the town-dwellers are prospering, who are the hardest working people—90 per cent of the prosperity even today can be traced only to their effort—should have a square deal. It is time that we withdraw ourselves from spheres to which we do not belong, where we do not have to teach anything and have to learn everything. Not only that, I have not the least doubt in my mind that the farmers of India, leave alone their being abler than the agricultural graduates that we are producing by the hundreds every year, are abler than any farmer anywhere in the world. If you do not provide them with adequate credit, do not expect anything from them.

श्री सुमत प्रसाद (मुजफ्फरनगर) : आपने जो मुझे समय दिया है, उसके लिए मैं आभार प्रदर्शित करना चाहता हूं । हमारे कृषि मंत्री ने हाउस में एक वक्तव्य दिया था जिस में उन्होंने गहूं की कीमतें निर्धारित की थीं । उन्होंने एक उसूल रखा है और वह यह है कि कीमत ऐसी होनी चाहिये जो किसान के लिए रिम्युनरेटिव हो और जो कंज्यूमर के मीन्ज के अन्दर हो । मैं समझता हूं कि इन दोनों में तालमेल रखना मुश्किल है । मुश्किल यह है कि आज इनफ्लेशन का दबाव है । रुपये की कीमत रोजमर्रा गिर रही है । किसान के दृष्टिकोण से पिछले साल जो एक मुनासिब कीमत थी, रिम्युनरेटिव कीमत थी वह आज रिम्युनरेटिव कीमत नहीं है और जो आज रिम्युनरेटिव कीमत होगी वह अब से छः महीने बाद रिम्युनरेटिव कीमत नहीं होगी । इस वास्ते जब तक इस समस्या को हल नहीं किया जायेगा तब तक खाद्यान्न की समस्या या प्लानिंग की समस्या को आप हल नहीं कर सकेंगे ।

[श्री समत प्रसा]

एक बात से मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ । पिछले साल 88 मिलियन टन का प्रोडक्शन हुआ । अगर मैं गलती नहीं कर रहा हूं तो 7.3 मिलियन टन इम्पोर्ट हुआ । उसके बावजूद भी मुल्क में कमी की ही आबोहवा थी । तमाम स्टेट्स गल्ले की मांग कर रही थीं और उनकी इस मांग को हमारी सरकार पूरा नहीं कर पा रही थी । जब पाकिस्तान का आक्रमण हुआ हिन्दुस्तान पर तो चाहे पैट्रियोटिज्म के मोटिव से कहिये या इस ख्याल से कि लड़ाई का समय है और इस समय में अन्न को बाहर निकाला जाये, गल्ले की कोई कमी बाकी नहीं हुई । आज भी पिछला बचा हुआ गल्ला बाहर आ रहा है । मुझे ऐसा लगता है कि गल्ले की कमी तो जरूर है लेकिन जिस दाम पर आप चाहते हैं कि किसान गल्ला दे उस दाम पर गल्ला देने के लिए किसान तैयार नहीं है । जिस अनुपात से और चीजों की कीमतें बढ़ी हैं उसी अनुपात से वह उसकी कीमत भी लेना चाहता है । आपने बैस्ट क्वालिटी के गेहूं की कीमत 62 रुपये फी क्विंटल मुकर्रर की है । मैंने लोगों से बातचीत की है । मुझे पता चला है कि 28 से 30 रुपये से कम में चालीस किलो अच्छे किस्म का गेहूं बाजार में नहीं मिलेगा । इस वास्ते मैं चाहता हूं कि खाद्य मंत्री इस बात पर गौर करें कि बजाय इसके कि इसको एक रिम्युनरेटिव प्राइस का नाम दिया जाये आप एक मिनिमम प्राइस सपोर्ट रखें ताकि अगर मार्केट उससे नीचे जाती है तो उस कीमत पर गल्ला खरीदा जा सके ।

पिछले साल जैसा मैंने कहा है 88 मिलियन टन पैदा होने के बावजूद भी गल्ले की कमी थी । आपकी रिपोर्ट में दर्ज है कि मार्केट एराइवल्ज कम हुई । क्यों कम हुई और यह गल्ला कहां गया इस पर आपको जरूर विचार करना चाहिये ।

जिस विषय की आज चर्चा की जा रही है पंडित जी के जमाने में भी इसी तरह से उसकी चर्चा चली थी । उस वक्त वह कहते थे कि एक सौ मिलियन एकड़ ऐसी भूमि है जिसके लिए एम्बोर्ड रेनफाल है या जिस के लिए इरिगेशन के साधन हैं और उस में इंटेसिव फार्मिंग किया जाये तो यह समस्या हल हो जायेगी । 1948 या 1950 में आपकी ग्रो मोर फूड कैम्पेन चली थी । उस वक्त की भी ऐसी ही स्पीचिज हैं प्रोग्राम और पालिसी तो आप की ठीक है । लेकिन जो इम्प्लेमेंटेशन है वह डिफैक्टिव है । गल्ले की पर्याप्त मात्रा में सप्लाई पहुंचाना सैंटर का काम है । यह ड्यूटी उन्होंने अपने ऊपर ली थी । जो गल्ले के वितरण का काम है, यह स्टेट्स पर छोड़ा था । गल्ला ज्यादा उपजाने के प्रोग्राम का जहां तक ताल्लुक है, इस पालिसी को इम्प्लेमेंट करने का जहां तक ताल्लुक है यह स्टेट्स का काम है । कम्युनिटी डिवलपमेंट का काम भी अब आपके अधीन आ गया है । मैं चाहता हूं कि हर एक स्टेट में दो तीन सैंटेर्ज आप बिल्ट करें और सरप्राइज विजिट्स ये हों और देखें कि क्या जो आपकी आर्गेनाइजेशन है उस में कहीं किसी की कोई जिम्मेदारी है । मैं आपको बतलाना चाहता हूं कि किसी की कोई जिम्मेदारी नहीं है । जो ब्लाक का प्रमुख है उसके पास फाइनेंसिस नहीं है और न कोई खास उसकी रिमपांसिबिलिटी है । जो जिला परिषद् का अध्यक्ष है, उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है । जो एग्रिकलचरल आफिसर्स हैं वे अपने आफिसों में बैठते हैं । इस तरह से यह काम चलने वाला नहीं है । जो आप स्कीम्ज बनाते हैं उनके इम्प्लेमेंटेशन की जिम्मेदारी डिस्ट्रिक्ट लेवल पर, ब्लाक लेवल पर और हर एक अफसर पर जब तक न डाली जाये और यह न कहा जाये कि यह आपकी जिम्मेदारी है कि इसको आप पूरा करें, तब तक आपका काम नहीं चल सकता है । अगर कोई अपनी जिम्मेदारी को पूरा करने में असफल रहता है तो उसके खिलाफ एक्शन लिया जाना चाहिये और जिस आदमी ने अच्छा काम किया हो, उसके

काम का एग्रिशिएशन होना चाहिये, उसको उसका रिवार्ड मिलना चाहिये । अगर आपने ऐसा किया तो आपकी गाड़ी आगे चल सकती है ।

एक मौके पर हमारे कृषि मंत्री जी ने एक बहुत अच्छी बात कही थी । उन्होंने कहा था कि असल प्राबलैम यह है कि जिन किसानों के पास दो दो या तीन तीन एकड़ भूमि है, उसकी उपज को कैसे बढ़ाया जाये । हमारे देश में कसरत इन लोगों की है जिनके पास बहुत थोड़ी भूमि है । बड़े बड़े फार्म जिनके पास हैं, उनकी तादाद बहुत थोड़ी है । लेकिन ये जो थोड़ी थोड़ी भूमि के मालिक हैं इनके पास पर्याप्त मात्रा में साधन नहीं हैं । ऐसा न हो कि ये दर-ब-दर की ठोकरें खाते फिरते रहें । इनके लिए ठीक समय पर साधनों का इंतजाम होना चाहिये । जो सम्बन्धित आदमी है उसकी यह ड्यूटी होनी चाहिये कि वह यह देखे कि साधन सब के सब इनके पास पहुंचे । अगर उनको साधन सुलभ कर दिये जायें तो अवश्य हमें अपने प्रयत्नों में कामयाबी मिल सकती है ।

जो प्लानिंग है इसका डिस्ट्रिक्ट एक यूनिट होना चाहिये । डिस्ट्रिक्ट में फिर ब्लाक यूनिट होना चाहिये । जितने विल्लेज लेवेल वर्कर हैं, ब्लाक डिवेलेपमेंट वर्कर हैं या एग्रिकलचर आफिसर हैं उनको हर एक विल्लेज के बारे में मालूम होना चाहिये कि उस विल्लेज में किस किसान को किस चीज की जरूरत है, किस किसान की भूमि कैसी है, किस किस्म की खाद की उसमें जरूरत है । अगर उनको यह सब मालम हो और पर्याप्त मात्रा में उस किसान को साधन मुहैया कर दिये जायें और उसके जो प्राबलैम्ज हैं उनको आप सिम्पेथेटिक तरीके से एप्रोच करें, किसान बन कर और किसान के नाते एप्रोच करें तो आप पायेंगे कि किसान बड़ा रिसपांसिव है, वह आपको अधिक पैदावार करके दे सकता है ।

हमारे शास्त्री जी ने एक अपील की थी । उस अपील का असर सब जगह हुआ था । उत्तर प्रदेश में भी हुआ था । ब्लाक लेवेल पर पांच छः मीटिंगों में जाने का मुझे अवसर मिला है । मैंने देखा है कि वहां किसान बड़े शौक से आते हैं, उत्साह भी उनमें बहुत है । वे कहते वे कि प्रधान मंत्री की अपील है और इस अपील पर हमें अमल करना है । लेकिन आप देखें कि कैसे अमल हो सकता है । उनको बैल खरीदने के लिए अगर तकावी की जरूरत होती है और उसके लिए वे एप्लीकेशन देते हैं तो तकावी उनको फसल बोने के एक महीने दो महीने बाद जा कर मिलती है । खाद की जरूरत होती है तो खाद समय पर नहीं मिलती है । समय पर बीज नहीं मिलते हैं । मैं चाहता हूं कि ये सब साधन उनको समय पर सुलभ करने का प्रबन्ध किया जाये ।

जहां तक बीज का सम्बन्ध है, मुझे मालूम हुआ है कि कुछ ऐसी वेराइटीज गेहूं की हैं कि अगर उनको लेट, नवम्बर के आखिरी सप्ताह में या दिसम्बर के पहले सप्ताह में भी आप खेत में डाल दें और खेत तैयार कर लें तो दो फसलें ली जा सकती हैं । लेकिन वह तभी हो सकता है जब कि नवम्बर के पहले सप्ताह में गन्ने की कटाई हो जाये । लेकिन दिक्कत यह होती है कि मिलें गन्ना नवम्बर में नहीं लेती हैं, वे तब चलती नहीं हैं । गन्ना खेतों में खड़ा रहता है । मैं प्रार्थना करता हूं कि आप रिसर्च करके गन्ने के बीज की ऐसी वेराइटीज तलाश कीजिये कि जो पहले ही तैयार हो जाय और मिल नवम्बर के पहले हफ्ते में चलने लगे और उनको उस समय गन्ना भी मिल जाय तो एक गन्ने की फसल हो गई और दूसरी गेहूं की फसल हो गई ।

सभापति महोदय : अब आप खत्म करें ।

श्री सुमत प्रसाद : जब तक आप किसान की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करेंगे तब तक इसमें कोई प्रगति होने वाली नहीं है

[श्री सुमत प्रसाद]

और अगर हमारे देश ने आत्मनिर्भरता हासिल न की गल्ले के मामले में तो आपका कोई प्लान कामयाब न होगा ।

Dr. L. M. Singhvi: All of us have spoken in the strain of commonsense and it is that which seems to be peculiarly lacking in the long period of travail and trial in the matter of our food policy. Mr. Nath Pai bewailed the fact that, in spite of the long co-habitation that the Government had had with these problems, they were not able to master the problems. He did not know perhaps the mysterious way in which the conjugal relationship between the Government and the problems to which it is wedded has worked out. The Government has become more and more henpecked as a consequence of this prolonged co-habitation. There has grown a sort of despair, a sort of soft yielding unquestioning slavery to the problems as a consequence of this long co-habitation. This long cohabitation has led to a prolific and unceasing procreation of problem-progney. Equally prolific, it seems, are the alibis and excuses which the Government, year after year, parades before this House and this country.

Mr. Chairman, the most refreshing part of the entry into this particular office of Mr. Subramaniam was the realisation that he brought to bear upon agricultural policies that old and outdated concepts would not enable us to make a technological breakthrough—the confidence that he sought to infuse in the technical and administrative cadres of people at various levels who have to implement the agricultural policies of the country. The most refreshing part is the outline of the new agricultural strategy which has been spelt out in a number of documents and which I personally consider to be basically sound. It is for this that I would like, first of all, to congratulate the Minister. As a matter of fact, it is not as if it is a routine rehash and re-statement of old and outdated policies. As a matter of fact, there are areas in which Mr. Subramaniam has made bold to enunciate new concepts and to advocate brave and welcome departures, for example, in respect of inputs, in respect of fertilisers, in respect of the policy that technologically alone we would be able to solve our problems of agriculture. In a country like ours, productivity is largely a matter of resource application. It appears that resources, both physical and technological, have been very scarce and yet, our Government was naive enough for years and yeras to hope that output would increase, although they were not prepared, although they were not planning, to put any substantial inputs. It is shocking to find, for, example, that the average quantity of nutrient per acre available in our country is no more than three pounds. As compared to this, in Japan, the per acre application of nutrients is as large as 300 pounds, *i.e.*, nearly hundred times as much as in our country. In Taiwan it is as much as 180 lbs. and in Korea it is as much as 100 lbs. per acre. I shall cite only the instances of the Asian nations because their circumstances are somewhat more comparable to our own circumstances.

Even out of these average 3 lbs. of nutrients available in our country per acre, most of it goes for cash crops with the result that so far as food crops are concerned, there is hardly any nutrient and fertiliser available for them. Indeed I have felt for a long time that in certain parts of the country where we have concentrated on production of food crops we are penalised. The agriculturist in those parts of the country, who has pursued steadfastly the production of food-grains actually has to pay a heavy price. The agriculturists in other parts of the country who have progressively been weaned away from

growing food crops and who have concentrated themselves on cash crops as a matter of fact did so at a considerably heavy cost to those who engaged themselves in production of food crops. I know that if a comparative and close study is made of this phenomenon it would be found that it has resulted in far-reaching inequities and injustices. This should be remedied I feel, and I hope that the Government would proceed to do something positive about this aspect of the matter.

About fertilisers, our experience has been that it is not available in time, and it is not available at reasonable prices. The co-operatives about which my hon. friend Shri Shyam Dhar Misra spoke somewhat eloquently.....

Mr. Chairman: Dr. L. M. Singhvi may resume his seat for a second. I would like to put one thing to the House. Before I had taken the chair, the Deputy-Speaker had put it to hon. Members whether they would like to sit extra for an hour or so.

Some hon. Members: No.

Mr. Chairman: I find that a number of hon. Members are very eager to speak on this subject. As it is, at 6 p.m. we have to adjorun this discussion; my submission is that in case hon. Members are prepared to sit for some time more, all the hon. Members who are here will be accommodated.

Several hon. Members: Yes.

Shri Raghunath Singh (Varanasi): That is a very good suggestion. We all welcome your suggestion, and all the hon. Members who are here should be given a chance to speak. The suggestion you have made is a very good and welcome suggestion.

श्री ब्रज बिहारी मेहरोत्रा (बिल्हौर) : हमें बोलने को समय नहीं मिलता । मैं वाक आउट करता हूं ।

(Shri Braj Bihari Mehrotra left the House)

श्री न० प्र० यादव : हम दो घंटे बैठने के लिए तैयार हैं ।

सभापति महोदय : आर्डर, आर्डर ।

श्री न० प्र० यादव : 8 बजे तक हम लोग बैठने के लिए तैयार हैं ।

Shri D. N. Tiwary (Gopalganj): It is not necessary that every Member should speak on every Demand. Only those should be given chance who have not spoken on any other Demands.

Shri Inder J. Malhotra (Jammu and Kashmir): Those who take special interest in the subject should also be given chance.

Mr. Chairman: I wish the hon. Member had been here earlier; then he would have seen that during the last one hour, only those Members had spoken who had not spoken before, and particularly friends from his own State.

Shri Inder J. Malhotra: You should also give chance to those Members who take interest in the subject.

Shri Sheo Narain: We are all interested in the subject, and, therefore, we are sitting here.

Dr. L. M. Singhvi: I hope that all this time would not be treated as part of my time.

I am speaking about the co-operatives which have been found guilty, in a number of cases, of distributing fertilisers either on the basis of rank patronage or on the basis of black-marketing. I have known both these types of instances, these have been brought to my attention, and yet it appears that we are anxious to pour in large amounts of money into the co-operative movement, but are not equally anxious to ensure that these moneys are properly utilised. Unless

[Dr. L. M. Singhvi]

that assurance is forthcoming, cries would continue to be raised, and I think, legitimately, against co-operatives even from quarters which are not basically and in principle opposed to the co-operative movement, but who are disheartened and disillusioned by the manner in which the co-operatives function, by and large, throughout the country, with some honourable exceptions.

Much is made of what has been done so far in the matter of irrigation in our country. Sometimes major irrigation projects are cited as the great examples of initiative and planning in our country; on other occasions, emphasis is laid on minor irrigation projects and what wonders have been achieved in that field by Government. I am sure none of us is prepared to be led by any of these arguments. I should like to read what a student of Indian economics has to say on this matter, not an altogether objective or impartial student; his is a pessimistic and dismal study in which these observations are contained; nevertheless, it is somewhat pertinent to the whole problem of irrigation engineering in our country and the approach or irrigation engineering in our country. This is what it says:

> "Between the beginning of the First Plan and the middle of the Third, India brought 20 million new acres under irrigation."—

this is a tall claim, and if it were correct, it would be a very heartening claim for the Government to make—

> "But 'under irrigation' does not mean what it does in the United States. It usually means providing water on an uncertain delivery schedule and in amounts insufficient for high yield. It is a valued method of drought relief, and what is often officially claimed for it is that it helps keep production from falling badly in drought",—

This is what the hon. Minister has on occasion claimed without carrying much conviction. The evalution, I have cited, goes on the say:—

> "Disciplined delivery of water for sustained high yield is a concept of irrigation, not yet accepted by the Ministry of Irrigation and Power. Nor, because the costliness of irrigation calls for austerity in project design, has drainage been incorporated into irrigation well enough to escape the charge often made by foreign irrigation specialists, that major irrigation projects have, through waterlogging and salinization, destroyed more productive acres than they have created. The government has invested heavily in irrigation; but it is a source of widespread complaint that major projects lag badly in construction, with the result that even the limited objective of drought relief is not effectively pursued. Clearly, irrigation projects do not explain the growth of output, and the big projects may have on balance retarded the growth of output".

It seems that unless the approach to irrigation is re-oriented, unless a drainage system is considered at the same time that irrigation is planned, unless we are able to make sure that irrigation will contribute in a measure commensurate with the outlays on it, the whole planning would be self-defeating and ill-conceived.

Now in the new agricultural strategy we are told that sufficient attention would be paid to soil conservation. I should like to point out what a publication of Government itself says—and this is accepted as axiomatic truth everywhere:

> "Historical and archaeological evidences show that the land resources are exhaustible and nations that have not taken care of their lands have had to pay by extinction. . . . "

It can be said perhaps with a measure of authority that soil erosion has taken away as much as 17—20 per cent of our land since the onset of this country. If this is a reasonably correct figure, then a devastating and shocking prospect is before us. I should like to know in particular as to what is planned to be done about arresting the advent of soil erosion at a fast pace.

I would also like to know as to whether projects for land utilisation and water utilisation have been properly developed and coordinated. I am not at all satisfied with what has been done in the past and I shall like the Minister to tell us how the new agricultural strategy would express itself in the matter of water and land management.

Mr. Chairman: He will conclude now.

Dr. L. M. Singhvi: I have taken, I think, only 11 mintues. I think 18 minutes are allotted to my group. I will conclude in the time that is due to me.

It seems we have effected an increase of about 50 per cent over a period of 15 years, but the per capita increase during this period has been perhaps less than 15 per cent because of the rise in population. That is where every Food Minister will continue to meet his Waterloo, unless something is done on a mass scale, and not in the peripheral manner in which the family planning policies are being pursued in this country.

I should like to emphasize that the Government should give the highest priority to agro-industries and industries which would contribute to the growth of agriculture in this country, because that is the only way we can really make a technological breakthrough in our present stagnation. That alone can bring to a stop the ship to mouth policies of the Government.

I would like to make a special plea for a far more massive conception for the desert development programme than the one that finds expression in the report before us. The report is a very bleak, cheerless document in this respect. It dismisses the whole idea in one neat little sentence which conceals more than it reveals. The allocations on this head have been considerably reduced, and I would like to make a plea that this project is pursued with maximum possible resources.

Mr. Chairman: He should conclude. I am very much hard pressed for time.

Dr. L. M. Singhvi: Sir, when you intervened, when I was speaking, the whole chain of thought was broken. Not only were three or four minutes taken away, but to resume the trend of thought, I had to take a few more minutes. You have your difficulties, but I have mine.

Mr. Chairman: Let me make myself clear. Now there is a backlog. Naturally I would request him to take his exact time and stop.

Dr. L. M. Singhvi: If you had raised this question, you did after I had concluded my speech and not in the middle, the whole chain of thought would not have been broken.

Mr. Chairman: There are matters to which the Chair has to pay attention. That should be very clear.

Dr. L. M. Singhvi: I feel that so far as the question of seed farms and better varieties of seeds are concerned, the Government is likely to fall a prey to the dogmatic attitude which is being propounded by some Members in this House as well as outside. I would like to know whether the Government are prepared even to take up these farms, but to allow the managerial skill of the private sector to operate in this field. Alternatively, let the Government compete if necessary and let competition show if the public sector seed farms can do as well. As a matter of fact, such competition would conduce to greater efficiency.

[Dr. L. M. Singhvi]

One word more and I have done, and this is in respect of the ascendency of centrifugal forces. A plea was entered by my hon. friend, Shri Nath Pai, in this connection. I should like to refurbish this plea, because I think this is the most central consideration today for the very survival of our democracy, for the survival and prosperity of our nation. Do not, for God's sake, allow each Chief Minister to run the country or his part of it as he likes it. There is this Parliament which is the conscience, and which is the focus, of the country as a whole, and I would like that the Government asserts itself in evolving policies of a national character, and not allow the parochial considerations, prompted by Chief Ministers or others, to prevail.

श्री मुहम्मद ताहिर (किशनगंज): जनाब चेयरमैन साहब, बहुत शुक्रिया । मैं ज्यादा वक्त नही लेना चहता, बहुत मुख्तसिर अल्फाज में अपनी बातों को आपके सामने रखूंगा । बात दरअसल यह है कि जहां तक गिज़ाई दिक्कतों का मामला है, मैं इतना जरूर कहूंगा कि हमारे मुल्क का और हमारी हुकूमत का हर-हर फर्द इस बात को महसूस करता है कि हमारे यहां गिज़ा की कमी की वजह से ऐसी हालत हो गई है कि हम को गैर मुल्कों के सामने गरदन झुकानी पड़ती है । इस अहसास का पैदा होना कि हम गिजाई हालत को ऐसा बनाये कि हम को दुनिया की किसी भी ताकत के सामने झुकना न पड़े, हाथ फैलाना न पड़े, यह अहसास पैदा होना इस मुल्क के लिये निहायत जरूरी है ।

इस सिलसिले में दो चार तजावीज अपने फूड-मिनिस्टर साहब के सामने रखना चाहता हूं और चाहता हूं कि वे उन पर गौर करें और एक्जामिन करें कि क्या वाकई उन से फायदा हो सकता है, फूड पोज़ीसन अच्छी हो सकती है । जैसा कि आप ने अपनी रिपोर्ट में दिया है कि हमारी पैदावार इस साल 88.4 मिलियन टन हुई और सके साथ साथ 7.5 मिलियन टनज अपने दूसरेइमुल्कों से मंगाया, या तो खरीद कर मंगाया या इस में गिफ्ट वगैरह भी शामि हैं । बहरहाल 7.5 मिलियन टन आपको बाहर से मंगाना पड़ा । मेरा यह कहना है कि यह मामला दो सूरतों से हल हो सकता है एक तो किसानो काश्तकारों और गवर्नमेंट के काम्रोपरेशन से हल हो सकता है, जब कि इन दोनो में मुशारिक्त हो । गवनमेंट की तरफ से काश्तकारों को यह बताया जाय कि हम को इस मुल्क की गिजाई हालत को अच्छा करने के लिये किस तरह से चलना है, चाहे आप उनको बातों के जरिये बताय या कानून के जरिये बताये । उनको बताया जाना चाहिये कि उनकी ज़मीन में जिस कदर गल्ला पैदा होता है, वह सिर्फ उनका नहीं है, बल्कि तमाम मुल्क का है, मजदूरों का भी है और गैर काश्तकारों का भी उस में हिस्सा है । यह जो गल्ला पैदा होता है उनका पैदा किया हुआ नहीं है, बल्कि उसको पैदा करने वाला वह है जो इन्सान को पैदा करता है, वहीं उस गल्ले को पैदा करता है । उनको सोचना चाहिये कि जो गल्ला हमारे खेतों में पैदा होता है, उस में से अपनी जरूरतों के लिये रख कर, उसके अलावा जो बचता है , वह मुल्क का है, दूसरे लोगों का उसमें हिस्सा है और वह उनके पास जाना चाहिये, किस तरह से जाना चाहिये, उसके लिये कानून बनाना होगा,उसके लिये बातें करनी होगी ।

आज हमारा मुल्क सोशलिज्म की तरफ जा रहा है, सोशलिज्म की बात हम लोग करते हैं, जिस कदर पैदावार मुल्क के अन्दर होती है उसका 10 फीसदी हुकूमत के गोडाउन में आना चाहिये, उसका 10 फीसदी गल्ला आप उनसे ले लीजिये । जिसका मतलब हुआ कि करीब 9 मिलियन टन गोडाउन में आजायगा और यह गल्ला उस गल्ले से ज्यादा होगा जो आप दूसरे मुल्कों से मंगाते हैं । 10 फी सदी मुल्क के गल्ले की जो पैदावार है वह गवर्नमेंट गोडाउन में चली जाय, तो यकीनन कोई जरूरत नहीं होगी कि हम बाहर से मंगाये, उसी से हमारा काम हो जायगा । इस के लिये आपको कुछ इनाम देना होगा—काश्तकारों को । पहला

तो उनको यह दिया जा सकता है कि आप उन से 10 फी सदी लेते हैं तो कम से कम 25 फीसदी रैन्ट रिडक्शन दिया जाय। 10 फीसदी गल्ला उनके खलिहान से आपके खलिहान में आ जाना चाहिये और उसकी वजह से आपकी जो बाहर से मंगाने की परेशानी है, वह बच जायगी।

एक दूसरी चीज़ मुझे यह अर्ज करनी है कि बदकिस्मती से काश्तकारों में एक टन्डेन्सी यह है कि वह गल्ले को बाजार में उस वक्त ले जाना चाहते हैं जब कीमत बढ़ जाय। कीमत बढ़, तब गल्ले को बाजार में ले जाय, ताकि ज्यादा पैसा मिले। यह एक बिल्कुल गलत बात है। वह काश्तकार गुनहगार होता है, वह गैर कानूनी काम करता है, जो यह सोचता है कि गल्ले को बाजार में जब ले जायगा, जब गल्ले का दाम बढ़ जायगा। उसको चाहिये कि वह अपनी ज़रूरतों के मुताबिक, अपने बाल बच्चों को खिलाने के लिये रखकर बाकी गल्ला बजार में ले जाये। लेकिन उस गल्ले के बारे में मैं यह भी कहूंगा कि वह गल्ला आप अपने दोस्तों के कब्जे में न्ही जाने दें जो कि बड़े बड़े बिजनेसमैन हैं। आप उसको खुद खरीद लीजिये, उसको अपने गोडाउन में ले जाइये, 10 फीसदी जो आपको मिलेगा, उसे ले जाइये और जो बाजार में बिकने आता है उसको खरीद कर ले जाइये, बिजनेसमैन के कब्जे में उसको न जाने दीजिये, वर्ना फिर वही किस्सा होगा, दाम बढ़गा तो वह उसको रोकेगा, लेकिन अगर आप के कब्जे में आता है तो दाम बढ़ने का सवाल ही पैदा नही होता।

इस से एक फायदा यह भी होगा कि फर्ज कीजिये कि काश्तकार 100 मन पैदा करता है, उस से 10 मन आप ले लेते हैं तो उस पर इस का यह भी असर पड़ेगा कि भाई इस दफा ज्यादा पैदा करना चाहिये, ताकि सरकार को देने के बाद उसके पास 100 मन रह जाय और इस तरह से वह ज्यादा पैदा करने की कोशिश करेगा।

काश्तकारों से जब आप यह गल्ला लेग तो उनके लिये यह इन्तजाम भी किया जाय कि जितनी काश्तकारी की जमीन है, आबपाशी का सामान हो मैन्योर्स का समान हो, वह उसको आपकी तरफ से मुहिया किया जाय। इस के लिये आपके साथ यह परेशानी है कि आपके पास फंड्स नहीं हैं, लेकिन मैं कहता हूं कि हमारी गवर्नमेंट फजूल चीजों पर बहुत रुपया खर्च करती हैं, मसलन फैमिली प्लानिंग पर रुपया खर्च करती हैं — क्यों खर्च करती है? यह फजूल-खर्ची नहीं तो क्या है? जितने इन्सान को दुनिया में पैदा होना है, वह तो होकर रहेगा, उसको कोई रोक नहीं सकता अगर आप में यह ताकत है कि फैमिली प्लानिंग के जरिये से इन्सान की पैदावार को कम करें तो यह भी ताकत होनी चाहिये कि हजारों फैमिलिज़–हसबैंड एण्ड वाइफ औलाद के लिये तरसते हैं, क्या उनको आप औलाद दे सकते हैं, अगर नही दे सकते तो फिर पैदावार बन्द करने के लिये हज़ारों करोड़ों रुपया क्यों खर्च करते हैं। इस को आप रोकिये।

कल्चरल प्रोग्रामों पर, नाच-गाने पर आप करोड़ों रुपये खर्च करते हैं, इस को एग्रीकल्चर के लिये खर्च कीजिये, किसानों को दीजिये, उनके लिये पानी का इन्ताजाम कीजिए उनकी भी मदद होगी और गल्ला भी ज्यादा पैदा होगा। मैं ज्याद कन्फ्यूजिंग चीजों को नहीं रखना चाहता हूं, आसान चीजें ही आपके सामने रख रहा हूं। इन पर अमल कीजिये, 10 फी सदी गल्ला किसानों से लेने के बाद आपका काम हो जाता है, आपको दूसरी जगहों से हाथ फैलाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी, यकीनन आप कामयाब हो जायेंगे, आपके यहां गल्ले की कमी कभी नहीं पड़ेगी।

[شری محمد طاہر (کشن گنج) ؛ جناب چیرمین صاحب - بہت تھوڑے - میں زیادہ وقت نہیں لونگا

دو صورتوں سے حل ہو سکتا ہے - ایک تو کسانوں کاشتکاروں اور گورنمنٹ کے کوپریشن سے حل ہو سکتا ہے جب کہ ان دونوں میں مشارکت ہو - گورنمنٹ کی طرف سے کاشتکاروں کو یہ بتایا جائے کہ ہم کو اس ملک کی غذائی حالت کو اچھا کرنے کے لئے کس طرح سے چلنا چاہیے آپ ان کو باتوں کے ذریعہ بتائیں یا قانون کے ذریعہ بتائیں - ان کو بتایا جانا چاہئے کہ ان کی زمین میں جس قدر غلہ پیدا ہوتا ہے وہ صرف ان کا نہیں ہے بلکہ تمام ملک کا ہے - مزدوروں کا بھی ہے اور کاشتکاروں کا بھی اس میں حصہ ہے - یہ جو غلہ پیدا ہوتا ہے ان کا پیدا کیا ہوا نہیں ہے بلکہ اس کو پیدا کرنے والا وہ ہے جو انسان کو پیدا کرتا ہے - وہی اس غلہ کو پیدا کرتا ہے - ان کو سوچنا چاہئے کہ جو غلہ ہمارے کھیتوں میں پیدا ہوتا ہے اس میں سے اپنی ضرورتوں کے لئے رکھ کر اس کے علاوہ جو بچتا ہے وہ ملک کا ہے - دوسرے لوگوں کا اس میں حصہ ہے اور وہ ان کے پاس جانا چاہئے - کس طرح سے جانا چاہئے اس کے لئے قانون بنانا ہوگا - اس کے لئے باتیں کرنی ہونگی -

آج ہمارا ملک سوشلزم کی طرف جا رہا ہے - سوشلزم کی بات ہم لوگ کرتے ہیں - جس قدر پیداوار ملک

[شری محمد طاہر]

چاہتا - بہت مختصر الفاظ میں اپنی بات کو آپ کے سامنے رکھونگا - بات دراصل یہ ہے کہ جہاں تک غذائی دقتوں کا معاملہ ہے میں سمجھتا ضرور کہونگا کہ ہمارے ملک کا ہماری حکومت کا ہر ہر فرد اس بات کو محسوس کرتا ہے کہ ہمارے یہاں غذا کی کمی کی وجہ سے ایسی حالت ہو گئی ہے کہ ہم کو غیر ملکوں کے سامنے گردن جھکانی پڑتی ہے - اس احساس کا پیدا ہونا کہ ہم غذائی حالت کو ایسا بنائیں کہ ہم کو دنیا کی کسی بھی طاقت کے سامنے جھکنا نہ پڑے - ہاتھ پھیلانا نہ پڑے - یہ احساس پیدا ہونا اس ملک کے لئے نہایت ضروری ہے -

اس سلسلے میں میں دو چار تجاویز اپنے فوڈ منسٹر صاحب کے سامنے رکھنا چاہتا ہوں اور چاہتا ہوں کہ وہ ان پر غور کریں اور ایگزیمن کریں کہ کیا واقعی ان سے فائدہ ہو سکتا ہے - فوڈ پوزیشن اچھی ہو سکتی ہے - جیسا کہ آپ نے اپنی رپورٹ میں دیا ہے کہ ہماری پیداوار اس سال ۸۸.۴ ملین ٹن ہوئی اور اس کے ساتھ ساتھ ۷.۵ ملین ٹنز آپ نے دوسرے ملکوں سے منگایا - یا تو خرید کر منگایا یا اس میں گفٹ وغیرہ بھی شامل ہیں - بہرحال ۷۰۵ ملین ٹنز آپ کو باہر سے منگانا پڑا - میرا یہ کہنا ہے کہ یہ معاملہ

کام کرتا ہے جو یہ سوچتا ہے کہ غلے کو بازار میں جب لے جائے جب غلے کا دام بڑھ جائے گا - اس کو چاہئیے کہ وہ اپنی ضرورتوں کے مطابق اپنے بال بچوں کو کھلانے کے لئے رکھ کر باقی غلہ کو بازار میں لے جائے - لیکن اس غلے کے بارے میں میں یہ بھی کہونگا کہ وہ غلہ آپ اپنے دوستوں کے قبضے میں نہیں جانے دیں جو کہ بڑے بڑے بزنس مین ہیں - آپ اس کو خود خرید لیجئے - اس کو اپنے گودانوں میں لے جائیے - دس فی صدی جو آپ کو ملے گا اسے لے جائیے اور جو بازار میں بکنے جانا ہے اس کو وہ خرید کر لے جائیے - بزنس مین کے قبضہ میں اس کو نہ جانے دیجئے - ورنہ پھر وہی قصہ ہوگا - دام بڑھے گا تو وہ اس کو روکے گا - لیکن اگر آپ کے قبضہ میں آتا ہے تو دام بڑھنے کا کوئی سوال ہی پیدا نہیں ہوتا -

اس سے ایک فائدہ یہ بھی ہوگا کہ فرض کیجئے کہ ایک کاشتکار ۱۰۰ من غلہ پیدا کرتا ہے اس سے دس من آپ لے لیتے ہیں تو اس پر اسکا یہ بھی اثر پڑے گا کہ بھائی اس دفعہ زیادہ پیدا کرنا چاہئیے تاکہ سرکار کو دینے کے بعد اس کے پاس ۱۰۰ من رہ جائے - اور اس طرح سے وہ زیادہ پیدا کرنے کی کوشش کرے

کے اندر ہوتی ہے اس کا دس فی صدی حکومت کے گودانوں میں آنا چاہئیے - اس کا دس فی صدی غلہ آپ ان سے لے لیجئے - جس کا مطلب ہوا قریب ۹ ملین ٹن آپ کے گودانوں میں آ جائیگا - اور یہ غلہ اس غلے سے زیادہ ہوگا جو آپ دوسرے ملکوں سے منگاتے ہیں - دس فی صدی ملک کے غلے کی جو پیداوار ہے وہ گورنمنٹ کے گودانوں میں چلی جائے تو یقیناً کوئی ضرورت نہیں ہوگی کہ ہم باہر سے منگائیں - اسی سے ہمارا کام ہو جائے گا - اس کے لئے آپ کو کچھ انعام دینا ہوگا کاشتکاروں کو - پہلا انعام تو ان کو یہ دیا جا سکتا ہے کہ چونکہ آپ ان سے دس فی صدی لیتے ہیں تو کم سے کم ۲۵ فیصدی ان کو فلیٹ رنٹ ریڈکشن دی جائے - دس فی صدی غلہ ان کے کھلیان سے آپکے کھلیان میں آ جانا چاہئیے اور اس کی وجہ سے آپ کی جو باہر سے منگانے کی پریشانی ہے وہ بچ جائے گی -

ایک دوسری چیز مجھے یہ عرض کرنی ہے کہ بدقسمتی سے کاشتکاروں میں ایک تھنڈنسی یہ ہے کہ وہ غلہ کو بازار میں اس وقت لے جانا چاہتے ہیں جب قیمت بڑھ جائے قیمت بڑھے تب غلط کو بازار میں لے جائیں تاکہ زیادہ پیسہ ملے - یہ بالکل غلط بات ہے - وہ کاشتکار گنہگار ہوتا ہے - وہ غیر قانونی

[شری محمد طاہر]

کاشتکاروں سے جب آپ یہ غلہ لیں گے تو ان کے لئے یہ انتظام بھی کیا جائے کہ جتنی کاشتکاری کی زمین ہے آبپاشی کا سامان ہو - فرٹیلائزر سامان ہو - وہ اسکو آپ کی طرف سے مہیا کیا جائے - اس کے لئے آپ کے ساتھ یہ پریشانی ہے کہ آپ کے پاس فنڈز نہیں ہیں - لیکن میں کہتا ہوں کہ ہماری گورنمنٹ فضول چیزوں پر بہت روپیہ خرچ کرتی ہے - مثلاً فیملی پلاننگ پر روپیہ خرچ کرتی ہے - کیوں خرچ کرتی ہے - یہ فضول خرچی نہیں تو کیا ہے - جتنے انسان کو دنیا میں پیدا ہونا ہے وہ تو ہو کر رہے گا - اس کو کوئی روک نہیں سکتا - اگر آپ میں یہ طاقت ہے کہ فیملی پلاننگ کے ذریعہ سے انسان کی پیداوار کو کم کریں تو یہ بھی طاقت ہونی چاہئے کہ ہزاروں فیملیز - ہسبینڈ اینڈ وائف اولاد کے لئے ترستے ہیں - کیا آپ ان کو اولاد دے سکتے ہیں - اگر نہیں دے سکتے تو پھر پیداوار بند کرنے کے لئے ہزاروں کروڑوں روپیہ کیوں خرچ کرتے ہیں - اس کو آپ روکئے -

کلچرل پروگراموں پر - ناچ گانوں پر آپ کروڑوں روپیہ خرچ کرتے ہیں - اس کو ایگریکلچر کے لئے خرچ کیجئے - کسانوں کو دیجئے ان کے لئے پانی کا انتظام کیجئے ان کی بھی مدد ہو گی اور غلہ بھی زیادہ پیدا ہوگا - میں زیادہ کنفیوزنگ چیزوں کو نہیں رکھنا چاہتا ہوں - آسان چیزیں ہی آپ کے سامنے رکھ رہا ہوں - ان پر عمل کیجئے - ۱۰ فی صدی غلہ کسانوں سے لینے کے بعد آپ کا کام ہو جاتا ہے - آپ کو دوسری جگہوں سے ہاتھ پھیلانے کی ضرورت نہیں پڑے گی - یقیناً آپ کامیاب ہو جائیں گے - آپ کے یہاں غلے کی کمی کبھی نہیں پڑے گی -]

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : सभापति महोदय . . .

श्री दी० चं० शर्मा: हम को कब तक यहां बैठना होगा ?

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : सभापति महोदय, मैं आपकी बहुत शुक्रगुजार हूं कि आपने मुझे बोलने का समय दिया यहां मेरा हक़ नहीं था क्योंकि कई लोग बोलने वाले हैं . . . .

सभापति महोदय : सुबह से मैं देख रहा था कि आप बोलना चाहती हैं ।

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : जी हां, मैं इसी लिये बैठी हुई थी और सदन भी मुझ पर बहुत मेहरबान रहा है, इसीलिये यह मौका आपने मुझे दिया, मै आपका भी और सदन का भी बहुत शुक्रिया अदा करती हूं कि मुझे आपने मौका दिया सुब्रह्मणयम साहब ने कल जो बयान दिया, मैं उस के लिये बहुत बधाई तो नहीं दे सकती क्योंकि उस दिशा में बहुत थोड़ी कार्यवाही हुई है । अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में लगभग सभी लोगों ने आवाज उठाई थी, उसके बाद सदन में जब खाद्य के बारे में बहस हुई तो, जोन्ज को हटाने के बारे में आवाज़ उठाई गई थी और मेरा ख्याल है खाद्य मंत्री इस बात से वाकिफ हैं कि उस वक्त यह कहा गया था कि जोन्ज़ के लिये फि से दोबारा तरीके से उस पर कायक्रम बनाया जाय नियन्त्रण हटाया जाय और इस समय जो मौजूदा परिस्थिति है उसको बदला जाय । पर मैंने यह भी सुना है कि कुछ मुख्य मंत्री हैं जो बहुत ज्यादा शक्तिशाली

बन गये हैं, वे इनके रास्ते में रुकावट डालते हैं। खाद्य मंत्री की जो सीमा है, मुझे उस की वाकफियत है और इस लिये मैं उन से यह कहना चाहती हूं, बल्कि उनको इस बात का अहसास होता होगा कि दुनिया में यह कुर्सी बिना कांटों के कभी नहीं रही है।

हर देश के खाद्य मंत्री को इन कांटों पर चलना पड़ा है और चलना पड़ेगा। खाद्य की समस्या कुछ ऐसी है कि खाद्य से जीवन बंधा हुआ है, जीवन से इसका लगाव है, जीवन खाद्यसे ही चलता है। इसलिए हमेशा ही खाद्य की समस्या को ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा। यहां पर आपने अधिक खेती से पैदा करने का प्रयत्न किया है लेकिन आप देखें कि जहा बहुत उन्नत खेती होती है वहां पर भी, अमरीका में भी लोग कहते हैं कि करीब 20 प्रतशित खेती में बारिश की वजह से या और नैचुरल काजिज से खेती में उथल पुथल हो जाती है। इसलिए यह जो परिस्थिति है, इससे खाद्य मंत्री को घबराना नहीं चाहिये जो आलोचना इनकी होती है और जो हुई है और जो आगे भी होगी—मुझे विश्वास है कि होगी—उसकी ओर तवज्जह देने की इनको कोशिश करनी चाहिये और देखना चाहिये कि इस आलोचना की बुनियाद के अन्दर बात क्या है ? पिछले दिनों खाद्य के बारे में जब बहस हुई थी और उस में जो आलोचना हुई थी वह इनके व्यक्तित्व की अलोचना नहीं थी। यह अलोचना नीतियों के प्रति थी। जहां तक नीति का सम्बन्ध है, मैं समझती हूं कि खाद्य मंत्री जी ने खुद कहा है कि उनका यह प्रयत्न रहा है कि वह केन्द्र से चलनी चाहिये, राज्यों से, प्रान्तीयता के अधार पर खाद्य की नीति नहीं चल सकती है।

अभी हमारे उपमंत्री महोदय ने कहा कि पांच हजार करोड़ रुपये एग्रिकल्चर सैक्टर से हमको फारेन एक्चेंज के रुप में प्राप्त हुए हैं। मैं जानना चाहती हूं कि उस में से कितना रुपया अभी तक खाद्यान्नों की उन्नति के लिए लगाया गया है। फारेन एक्सचेंज से इस उन्नति के काम में कितना रुपया खर्च किया गया है। मेरा खयाल है कि फारेन एक्सचेंज के नाम पर निहायत ही कम रुपया लगाया गया है खाद्यान्नों की उन्नति के ऊपर। बाहर से खाद्यान्नों के आयात पर तो हम खर्च करते रहे हैं लेकिन खाद्य की उन्नति के ऊपर फारेन एक्सचेंज का ज्यादा रुपया हम खर्च नहीं कर सके हैं और उस अनुपात में नही लगा सके हैं जिस अनुपात में लगाया जाना चाहिये था।

यह इस बात की ओर इशारा करता है कि खुद खाद्य मंत्री और खाद्य मंत्री की नीतियां बंध गई हैं बिल्कुल एक छोटे से और संकीर्ण दायरे में। इस बात को मैं इसलिए उठाना चाहती हूं कि जैसा पहले भी कहा गया है कि हिन्दुस्तान के खाद्य मंत्री को हिन्दुस्तान के खाद्य मंत्री की तरह बनना पड़ेगा, अपने आपको बदलना पड़ेगा और खाद्य की समस्या को भारत की खाद्य समस्या बन कर रहना पड़ेगा। अगर ऐसा हुआ तभी समस्या का समाधान हो सकेगा।

मैं आपके सामने रफी साहब की बात रखना चाहती थी। वह खाद्य मंत्रियों की बैठकें बुलाना बिल्कुल नापसन्द किया करते थे। होता क्या है इन बैठकों में। मुख्य मंत्री या खाद्य मंत्री आते हैं और अपनी अपनी बात बोलते हैं। मैं समझती हूं कि उनका अपना अपना दायरा है। प्रान्तों में वे रहते हैं। अपने अपने प्रान्त की बात वे नहीं करेंगे तो और कौन करेगा। सारे हिन्दुस्तान की बात वे क्यों बोलेंगे। वोट लेने हैं तो उनको अपने प्रान्त में से लेने हैं। उन लोगों को यहां से वोट नहीं मिलते हैं, प्रान्तों में से मिलते हैं। इस वास्ते स्वाभाविक है कि वे अपने अपने प्रान्त की बात कहें। अपने अपने प्रान्त की बात वे कहेंगे तो आपको उनकी बात को सुनना भी पड़ेगा। जब आप उनको बुलायेंगे तो उनकी बात को सुनेंगे भी।

[श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा]

उन्हें बुला कर आप उनको बैरंग वापिस कर दें, यह भी नहीं हो सकता है । रफी साहब की बात मैं कह रही थी । बराबर यह नीति चलती आई है कि मुख्य मंत्री या खाद्य मंत्री प्रान्तों से जब बुलाये जाते हैं तो खेती के मामले में उन से सलाह मश्विरा होना चाहिये । लेकिन देखा जाता है कि खेती के मामले में तो कम विचार होता है, खाद्य के मामले में राय मश्विरा अधिक होता है । जवाहर लाल जी ने हमेशा इस बात पर तवज्जह दी थी कि खेती का जो मामला है, खेती की जो समस्या है उस में हर एक तबके के लोगों की राय से चलना पड़ेगा, चूंकि खेती लोगों को करनी है, प्रान्तों में, गांवों में, जिलों में करनी है । खाद्य की समस्या को लोगों की राय से चलना पड़ेगा, मुख्य मंत्री जो हैं, उनकी राय से ही नहीं । रफी साहब खाद्य मंत्रियों की बैठकें बहुत कम बुलाया करते थे, अव्वल तो बुलाया ही नहीं करते थे । एक बार खाद्य मंत्रियों की बैठक बुलाने का निर्णय हुआ और उनको जब मालूम हुआ कि बहुत पेचीदगियां आने वाली हैं तो उन्होंने कहा कि मैं बीमार हो गया हूं, मैं अकेले में बात कर लूंगा । वह नहीं गए—

श्री ज्वा० प्र० ज्योतिषी (सागर) : हमारे देश में प्रजातंत्र है । मुख्य मंत्री प्रजातंत्र के घटक हैं । उनकी राय लेना प्रजातांत्रिक है ।

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : मैं मुख्य मंत्रियों पर आक्षप नहीं कर रही हूं । मैं यह कहना चाहती हूं कि खाद्य की जो नीति है यह मुख्य मंत्रियों की नीति नहीं होनी चाहिये, प्रान्तीय नीति नहीं होनी चाहिये । यहां व्यक्तिगत कोई सवाल नहीं है । इस वास्ते जब आप मुख्य मंत्रियों को बुलाते हैं, चार आदमियों को बुलाते हैं तो उनकी बात बहुत हद तक मानने के लिए आपको मजबूर भी होना पड़ता है ।

सभापति महोदय : आप प्वाइंट्स कवर करें । समय कम है ।

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : मैं समझती हूं कि इस नीति में आमूल परिवर्तन होना चाहिये । आज जो हम लोग बात कह रहे हैं वह खाद्य मंत्री को ताकत देने के लिए कह रहे हैं । खाद्य मंत्री इस बात को लोगों के सामने रख सकते हैं, मुख्य मंत्रियों के सामने रख सकते हैं, राज्य सरकारों के सामने रख सकते हैं, वह कह सकते हैं कि सारा संसद् और सारी अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और सारा देश इस बात को चाहता है और इस नीति को बदलना चाहता है ताकि इनको ताकत मिले ।

जोन्स की बात भी की जाती है । सिर्फ हम लोग ही इस की बात नहीं करते हैं । संयुक्त राष्ट्र संघ का जो फूड एंड एग्रिकलचरल आर्गेनाइजशन है उसने भी इसकी चर्चा की थी, उसने चावल की चर्चा की थी, चावल पर जो प्रतिबन्ध लगाया गया है, उसकी चर्चा की थी । उसने कहा था कि हमारी समस्या जो चावल की इतनी बिगड़ गई है उसका एक मात्र कारण जोंज हैं । फड एंड एग्रिकलचरल आर्गेनाइजेशन के प्रतिनिधिमंडल ने अपनी यह रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र संघ के सामने रखी थी । ऐसा मालूम होता है कि खाद्य मंत्री महोदय भी अपनी नीति में जो जोंज के बारे में है आमूल परिवर्तन कर रहे हैं ।

श्री द्वा० ना० तिवारी (गोपालगंज) : चावल के मामले में नहीं ।

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : गेहूं से इन्होंने शुरुआत की थी । चावल के मामले में भी यह करेंगे । एक साल में इनकी नीति में आमूल परिवर्तन होगा, ऐसा मुझे विश्वास है ।

कहा जाता है कि हम पलट पलट करके एक नीति अख्तयार करते हैं । जो एक ग्राम समस्या है वह जब अस्थायी तौर से खत्म हो जाती है तो हमारी नीति भी खत्म हो जाती है । हमने तृतीय योजना जब बनाई तो 110 मिलियन टन खाद्य का उस में टारगेट रखा । फोर्ड फाउंडेशन के अधिकारियों ने भी कहा कि 110 मिलियन टन पैदा हो सकता है अगर फर्टिलाइजर आदि सब कुछ लगाया जाए । उसके बाद जब दो मिलियन टन से पांच मिलियन टन अन्न आया इस देश में बाहर से तो हमने अपना टारगेट भी बदल दिया । हम 110 के बजाय 100 मिलियन टन पर चले गए । इसी तरह से मैं नाइट्रोजन फर्टिलाइजर की बात करती हूं उसका टारगेट डेढ़ मिलियन टन था । उसको हमने एक मिलियन टन कर दिया। आपके सामने आज पहली बार खाद्य समस्या नहीं आई है । 1947 में भी थी और 1958 में भी यह आपके सामने थी । आगे भी यह आपके सामने होगी । आपने बाहर से अन्न मंगा लिया और आपकी जरूरत पूरी हो गई तो उसके बाद आप सो गये । ऐसा आप करते आ रहे हैं । खाद्य मंत्री ने इस तौर एक कदम उठाया है । वह 21 मिलियन एकड़ में बीज अच्छा पैदा करके लोगों को देने का विचार रखते हैं । मैं कहना चाहती हूं कि इससे ही आपकी जो समस्या है उसका समाधान नहीं हो जाएगा ।

आज इस मुल्क में जो नुकसान हो रहा है, उसका भी एक दृष्टांत मैं आपको देना चाहती हूं । यह मध्य प्रदेश की आडिट रिपोर्ट है। मैं चाहती हूं कि हमारे ज्योतिषी जी इसको सुनें । उसके प्रान्त की यह आडिट रिपोर्ट है । इस में कहा गया है कि पांच लाख रुपये का वहां नुकसान हुआ जहां गल्ला स्टोर किया जाता है । इसकी अच्छी व्यवस्था नहीं थी अब आप देखें कि इसको मध्य प्रदेश की सरकार ने किस तरह से पूरा किया । उसने चालीस रुपये प्रति टन फर्टिलाइजर की कीमत को बढ़ा कर इस नुक्सान को पूरा किया । यह दाम खेती करने वाले लोगों को देना पड़ा । यह बोझा उन पर जा कर पड़ा ।

मैं एक सुझाव आपको देना चाहती हूं । बीज फार्म्स का काम इन्होंने हाथ में लिया है, बीज अच्छी किस्म के लोगों को देने के लिए बीज फार्म्स स्थापित करने का काम हाथ में लिया है । डगलस जे० एक बहुत बड़े समाजवादी नेता हुए हैं । उन्होंने जो कुछ कहा है वह मैं आपके सामने रखना चाहती हूं। उन्होंने कहा है कि अगर हम समाजवादी रीति से किसी काम को करना चाहते हैं तो राज्य को अपने हाथ में उद्योग या जमीन ले कर—

सभापती महोदय : अब आप समाप्त करें ।

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा : आज हम बीज पैदा करना चाहते हैं । रोपड़ में बिड़ला ने एक फार्म दिया है । उसके बारे में काफी शिकायत हुई । वह इसलिए हुई कि हमने बिड़लाज को लीज दे दी अगर हम उस जमीन को खुद अपने कब्ज में रखते, सरकारी कब्जे में रखते और प्राइवट सैक्टर में जो टैक्नीकल नो हाऊ है उनको हम बुला कर, उनको एक मइनोरिटी पार्टिसिपेशन दे कर कमिशन के तौर पर हम उनकी राय लेते, उनका मश्विरा लेते, तो हमें ज्यादा लाभ हो सकता था । उनको हम कमिशन के तौर पर कुछ दें और उनका जो साइंटिफिक नो हाऊ है उसका हम उत्पादन में विस्तारपूर्वक उपयोग करें और इस आधार पर हर राज्य में एक एक सीड फार्म कायम कर दें तो बहुत लाभ हो सकता है । अगर उस में प्राइवेट सैक्टर आता है काम करने के लिये टैक्नीकल बातों को रखने के लिए और

[श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा]

आपको फायदा पहुंचाना चाहता है तो स्टेट ओनरशिप के बेसिस पर आप उन्हें साझीदार बनाइये। जहां आनरशिप आपके हाथ में रहता है और कमिशन के तौर पर आप लोगों को देते हैं लीज के रूप में न दें और उनको ओनर न बनायें तो आपको बहुत ज्यादा यह शिकायतें नहीं सुनने को मिलेंगी ।

18.00 hrs.

COMMITTEE ON PRIVATE MEMBERS' BILLS AND RESOLUTIONS

EIGHTY-SIXTH REPORT

Shri Hem Raj (Kangra): Sir, I beg to present the Eighty-sixth Report of the Committee on Private Members Bills and Resolutions.

18.01½ hrs.

DE-SCHEDULING* OF SCHEDULED CASTES

Mr. Chairman: We will now take up the half-an-hour discussion.

श्री दे० शि० पाटिल (यवतमाल) : सभापति महोदय, अनुसूचित जाति और जमातों की सूची के संशोधन और अनुसूचित जातियों के अनुसूची से निकाले जाने के बारे में चर्चा उठाने का मुझे जो अवसर दिया उसके लिए मैं आपका अभिनन्दन करता हूं और मैं शुरू में ही यह बात कहना चाहता हूं कि बहुत दिन से यह मामला पड़ा हुआ है ।

सभापति महोदय : हाफ ऐन आरर डिस्कशन के बाद हम आधा घंटा और बैठ सकते हैं । अगर आपकी इच्छा हो तो आप बैठे रह सकते हैं ।

श्री न० प्र० यादव (सीतामढ़ी) : मैं दो घंटा तक बैठने के लिए तैयार हूं । मुझे टाइम ही नहीं मिला है । (**व्यवधान**)..

श्री दे० शि० पाटिल : इस मंत्रालय का भार जिन्होंने संभाला है वह आदर्णीय श्रीमती चन्द्रशेखर स्टेट वाइज मीटिंग रख कर बहुत जल्दी यह सवाल हल करने की कोशिश कर रही है । उसके लिए मैं उनका अभिनन्दन करता हूं । दो सवाल इसमें आते हैं सभापति जी। एक तो प्रादेशिक प्रतिबंध हटाने का और सूची का परीक्षण करने का है । जो लिस्ट बनायी जाती है वह स्टेट-वाइज लिस्ट रहती है लेकिन कुछ ऐसी स्टेट्स हैं जैसे कि आसाम, केरल मध्य प्रदेश और विदर्भ में शिड्यूल्ड और नान-शिड्यूल्ड एरिया ऐसी लिस्ट बनायी जाती है । शिड्यूल्ड एरिया में जो लोग रहते हैं उनको तो शिड्यल्ड ट्राइब माना जाता है । लेकिन शिड्यूल्ड एरिया के बाहर जो लोग रहते हैं उनको आदिवासी या शिड्यूल्ड ट्राइब नहीं माना जाता है । इसका परिणाम यह होता है कि मेम्बर आफ दि सेम कास्ट अगर शिड्यूल्ड एरिया के बाहर रहता है तो आदिवासी नहीं माना जाता है और इस का परिणाम यह होता है कि उसको किसी भी केन्द्रीय स्कीम का फायदा नहीं मिलता इस एरिया रेस्ट्रिक्शन की वजह से । सभापति महोदय, मेम्बर्स आफ दि सेम फेमिली में भी डिस्टिंक्शन किया जाता है । अगर पिता शिड्यूल्ड एरिया में रहता है तो शिड्यूल्ड ट्राइब माना जाता है, लेकिन अगर उसका लड़का शिड्यूल्ड एरिया के बाहर रहता है तो वह आदिवासी नहीं माना जाता है और इस कारण कोई भी एजूकेशनल फैसिलिटी या एम्प्लायमेंट

*Half-An-Hour Discussion.